UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178738

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H87h/A41M Accession No. G.H. 230

Author अलक्ष हाबादी

Title मुस्कान / 1945

This book should be returned on or before the date last marked below.

मुस्कान

शागिर्द अलाहाबादी

सम्पादक—

साहित्यालङ्कार श्री केशव प्रसाद पाठक एम्. ए.

मुस्कान-महल

जब्बलपुर.

प्रथम संस्करण | जनवरी १९४५ | मूल्य दो रुपए

प्रकाशक—आर. के. अग्रवाल, मुस्कान-महल, जबलपूर

धन्यवाद

आजकल ऐसा चलन है कि पुस्तक की समाप्ति पर लेखक-गण अपने कुछ मित्रों को, जिनसे कि उन्हें उस पुस्तक के लेखन में थोड़ी भी सहायता मिलती है, धन्यवाद देते एवं कृतज्ञता प्रकट करते हैं। मेरा ऐसा विश्वास है कि यदि मैं ऐसा न करूं, तो मेरे सहायक मित्र कुछ ऐसे अनिष्ट हैं कि वे इस ज़रा सी बात के लिए बुरा न मानेंगे; पर कुछ दोस्तों की ज़िद है कि मुझे सहायक मित्रों को धन्यवाद देना ही चाहिए, यद्यपि इनर कवर के पीछे जो मैटर धन्यवाद के ऊपर और नीचे छपा है, उसके अतिरिक्त और कुछ भी छापने का क़ायदा नहीं है। फिर भी दोस्तों की ज़िद कोई चीज़ होती है। अस्तु जगह न होते हुए भी मैं बेक़ायदे जगह निकाल कर—सब से पहला धन्यवाद मित्रवर केशव प्रसाद जी पाठक एम्. ए. को देता हूँ, जिन्होंने अपना बहुत सा समय देकर 'मुस्कान' का माइन्यूटिली संपादन करने का कष्ट उठाया है। दूसरा धन्यवाद मैं श्री चन्द्र शेखर शर्मा, चाँद हिंदोस्तानी को देता हूँ, जिन्होंने अपने चुनिंदा अशआर भेजकर मेरा उत्साह-वर्धन किया है। तीसरा धन्यवाद मैं श्रीप्रयागनारायण अग्रवाल 'दीवाना' इलाहाबादी को देता हूँ,जिन्होंने आठ–दस साल पहले, जबकि मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया था, मौज़ूँ अशआर चुन-चुन कर देने में मुझे काफ़ी मदद दी थी। आख़ीर में मैं उन तमाम पुस्तकों के लेखकों, शायरों, संग्रह–कर्त्ताओं, सम्पादकों और प्रकाशकों को धन्यवाद देता हूँ, जिनकी पुस्तकों से मुझे ज़रा भी मदद मिली है।

कुछ मित्रों का कहना है कि उन पुस्तकों की सूची भी होनी चाहिए, जिनसे मुझे मदद मिली है,लेकिन भई ! अब मैं बिल्कुल मजबूर हूँ, क्योंकि प्रकाशक का मत है कि नवीन आर्डिनैन्सानुसार इस पुस्तक को हर हालत में ३१ जनवरी सन् १९४९ तक १२ बजे रात के पहले–पहले प्रेस से बाहर हो ही जाना चाहिए। अस्तु अब अधिक लिखा–पढ़ी में गड़बड़ी होने की आशंका है। लेहाज़ा फिर कभी देखा जायगा। अच्छा नमस्ते !

आप लोगों का —शागिर्द।

मुद्रक — श्रीकृष्ण प्रेस, गोविन्दगंज, जबलपूर।

सम्पादक की क़लम से—२

हाँ, तो यह मुस्कान है। मुस्कान ही तो ठहरी! यह इनके ओठों पर क्या आगई कि हमें भा गई, लुभा गई, चुभ गई, गड़ गई। मुस्कान में मेल है। मेल है क्यों नहीं? झगड़े के बाद अगर आप मुस्करादिए, तो आपने सरासर मेल का प्रस्ताव पेश कर दिया। फिर, यदि आप कभी किसी की मूर्खता पर मुस्कराते हैं, तो कभी किसी की धूर्तता पर; कभी प्रसन्नता की रसभरी भोली मुस्कान होती है, तो कभी व्यंग्य की काट करने वाली मुस्कान जी, तो इस मुस्कान में सभी कुछ है—चुटकी, मसलन, वार काट, तनज़, ताना, फिसलन, ख़ुशी और रंज भी।

मुस्कान की भाषा का मेल भी देखते ही बनता है—हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी और संस्कृत चारों गलबहियाँ डाले नज़र आती हैं। पुराने और नए शायरों को तो जैसे एक ही मशायरे के मंच पर बुला लिया गया है। देवी, देवता और ख़ुदावन्द को एक ही ख़ान्दान का साबित कर दिया गया है। क़िस्सा मुख़्तसिर यह कि इसमें हर तरह का मेल है। और हो भी क्यों न? हैं भी तो इसके लेखक शागिर्द अल्लहाबादी, यानी इलाहाबादी अर्थात् प्रयाग-वासी। प्रयाग! जहाँ गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम है। तो, गोया इसे भी त्रिवेणी समझिए। ग़ोता लगाइए और पर्व पर स्नान कर पुण्य लूटिए।

खिल-खिलाकर हँसना खुलकर हँसना है। उसमें गम्भीरता का अभाव रहता है। मुस्कान में संयम और पेचीदगी दोनों पाए जाते हैं। जी हाँ, तो यह **मुस्कान** है।

केशव-कुटीर,
जबलपुर.
२७-१-१९४५

केशव प्रसाद पाठक

—मुस्कान की ग़लितयाँ—

कभी कम्पोज़ीटर कम्पोज़ करते-करते, कभी करेक्शन करते-करते, कभी प्रूफ़-रीडर प्रूफ़ पढ़ते-पढ़ते और कभी मैशीन-मैन छापते-छापते मुस्करा पड़ा; इस प्रकार मुस्कान में कहीं-कहीं कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं। विचार था कि अशुद्धि-पत्र छाप दिया जाय, किन्तु इधर एक ऑर्डिनैंस मुस्करा पड़ा; फल-स्वरूप जो प्रकाशन १२ जून सन् १९४४ के पहले आरंभ हो चुके थे, उन्हें ३१ जनवरी सन् १९४५ तक प्रेस के बाहर निकाल देने के लिए विवश हो जाना पड़ा। अस्तु शुद्धि-पत्र के लिए अब हमारे पास समय और काग़ज़ नहीं रह गया है।

हमें तो उम्मीद है कि हमारे पाठक भी मुस्कान के झोंक में ग़ल्तियों को सही पढ़ डालेंगे; मगर अगर कहीं ऐसी बेढब ग़ल्ती होगी भी, जहाँ जबरन आँख अटक ही जाएगी, तो हमारे पाठक समझदार हैं, हमें विश्वास है कि वे स्वयं ही ग़ल्तियों को ठीक करके पढ़ लेंगे। हम तो अब अगले एडीशन में ही ठीक कर सकेंगे; मजबूरी है, किया क्या जाय?

—प्रकाशक

मुस्कान



प्रेमोपहार

श्री _____

के दस्ते हिनाई में !

की तरफ़ से—

बाअदब पेशे नज़र दिलचस्प यह मुस्कान है।
हो क़ुबूले अर्ज़ गर तो आपका अहसान है॥

समर्पण

किसे समर्पित करूँ इसे मैं,
न कोई ऐसा मिला है दिलकश[१] ।
न मैं हूं आशिक़ किसी परी पर,
न कोई मुझ पर फ़िदा हुआ है ॥
लिहाज़ा मेरा ख़याल है यह,
कलाम इसमें अयाँ[२] हैं जिनके ।
उन्हीं को कर दूँ इसे समर्पित,
उन्हीं का हक़ मौज़ूँ[३] जँच रहा है ॥
उन्हीं के गुल हैं उन्हीं की क्यारी,
बहार उनकी ख़िज़ाँ[४] भी उनका ।
वही हैं बुलबुल क़फ़स[५] वही हैं,
ख़ुदी को ख़ुद में फँसा रहे हैं ॥
हैं बाग़बाँ वो चमन है उनका,
उजाड़ते हैं, बना रहे वो ।
उन्हीं के आहो-फ़ुग़ाँ[६] हैं जारी,
उन्हीं के शोले[७] भड़क रहे हैं ॥

---

१. दिल को लुभाने वाला, प्रिय । २ व्यक्त, प्रगट । ३. ठीक, उचित । ४. पतझड़, हेमन्त ऋतु । ५. पिंजड़ा । ६. रोना चिल्लाना । ७. आग की लपट ।

उन्हीं का कूचा उन्हीं की बस्ती,
वही हैं आशिक़ वही हैं शैदा।
वही हैं बोतल शराब उनकी,
वो बनके साक़ी पिला रहे हैं॥
वही झुमाते हैं, झूमते हैं,
वही हैं रोते वही रुलाते।
उन्हीं का ख़त है, वही हैं क़ासिद,
कलम वो अपना चला रहे हैं॥

उन्हीं का ख़न्जर[१], तुफ़ंग[२] उनका,
बने हैं अब्रू[३] कमान उनके।
वही हैं क़ातिल वही हैं बिस्मिल,
वो तीरे मिज़गाँ[४] चला रहे हैं॥

उन्हीं की मैयत[५] जनाज़ा उनका,
वही हैं उसको उठाने वाले[६]।
उन्हीं की तुरबत[७], उन्हीं का सहरा[८],
वो बुत[९] बने खुद सजा रहे हैं॥
उन्हीं के मोती, उन्हीं की लड़ियाँ,
पिरोया हमने न कुछ है अपना।

---

१. बन्दूक़। २. भौंह। ३. घायल। ४. आँखों की पलकें। ५. लाश। ६. अर्थी। ७. समाधि, क़ब्र। ८. जंगल। ९. मूर्ति, प्रियतम।

ये हार उनका सजा बनाकर,
गले में उनके पिन्हा रहे हैं ॥
उन्हें मुबारक हो हार उनका,
मुझे मुबारक दुआ जो दें वो।
वो माफ़ करदें मेरी हिमाक़त,
ख़ुदा से हम यह मना रहे हैं ॥

— लेखक

मुस्कान का मकसद

किसी शायर ने दिल तोड़कर कहा है :—

दिल दे अगर, तो ऐसा परवरदिगार दे।
जो रंज की घड़ी भी ख़ुशी में गुज़ार दे ॥

एक दोस्त ने और फ़रमाया है :—

ज़िन्दगी ज़िन्दा दिली का नाम है।
मुर्दा दिल ख़ाक जिया करते हैं ॥

ज़माने का रवैया है — हमेशा पलटते रहना, कभी हँसी है, कभी ख़ुशी है, कभी रंज है, कभी ग़म है, कभी बहार है, कभी पतझड़, कभी बरसात है, तो कभी सूखी गर्मी और कभी सख़्त जाड़ा; लेकिन हर हालत में, हर मौसम में इन्सान अपने आराम का सामान चाहता है। इसी प्रकार दिल या दिमाग़

रातो-दिन ज़रूरियाते-ज़िन्दगी के चक्कर में परेशान रहने के बाद कुछ आराम की ख्वाहिश करता है। जिस वक्त वह आराम-
१
गाह में होता है, कुछ मनोरंजन का सामान चाहता है। खुश होना चाहता है। मुस्कराना चाहता है। मुस्कराहट दौड़ती है – गुदगुदी पैदा होने पर। गुदगुदी पैदा होती है; दिल में — वे सिर पैर की किन्तु, मज़ेदार चीज़ें पढ़ने-सुनने या देखने पर।

२
बस, इसी इम्पॉरटेन्ट ज़रूरत को पूरी करने के लिए "मुस्कान" का जन्म हुआ है। इसे आप पढ़ सकते हैं। पढ़वाकर सुन सकते हैं। इसके अनूठे दिलचस्प चित्रों को देख सकते हैं। इस प्रकार इसे पढ़ने, सुनने, एवं देखने से ऐसी गुदगुदी पैदा होगी कि एक हल्की सी मुस्कान आपके होठों पर दौड़ जायगी। और तब —

मुस्कान का हर एक टुकड़ा, महफ़िले मुस्कान हो।
३ ४
अहले आलम हँस पड़ें, पूरा मेरा अरमान हो॥

— लेखक

१— घर। २— आवश्यक। ३— दुनिया वाले।
४— इच्छा।

एक तमाशा

हम अर्बी को उर्दू क्यों न करें,
वह उर्दू को भाषा क्यों न करें।
झगड़े के लिये अखबारों में,
मज़मून[1] तराशा[2] क्यों न करें॥
आपस में लड़ाई कुछ भी नहीं,
पर एक अखाड़ा क़ायम है।
जब इससे फ़लक[3] का दिल बहले,
हम लोग तमाशा क्यों न करें॥

— बक़ौल अकबर

अर्थात— साहित्य क्षेत्र के सारे झगड़े मनोरंजन के लिये हैं।

१—निबंध, रचना, लेख। २—काटना, छाँटना-सँवारना, बनाना। ३—आसमान।

शृङ्गार पर

जनाब मौलाना हाली साहब ने किसी वक्त शृङ्गार रस के शायरों को बड़ा मज़ेदार आशीर्वाद दिया है :—

बुरा शेर कहने की गर कुछ सज़ा है।
अबस[१] झूठ बकना अगर[२] नारवाँ है॥
तो वह मोहक्कमा जिसका क़ाज़ी[३] खुदा है।
मुक़र्रर जहाँ नेकी-बद[४] की जज़ा[५] है॥
गुनहगार[६] वाँ छूट जावेंगे सारे।
जहन्नुम[७] को भर देंगे शायर हमारे॥

भाई वाह! मैं तो हमेशा इस बात का क़ायल रहा हूँ कि बात चाहे जब जिस विषय की कही जाय; कहने का तर्ज़[८] इतना मज़ेदार हो कि, मौक़ा चाहे कैसा भी बेतुका क्यों न हो मगर सुनने वाला हँस पड़े। उसके दिल में तर्ज़-तक़रीर का सिक्का बैठ जाय। वह गद्‌गद् होकर लोट-पोट हो जाय। यद्यपि हाली साहब की बात ज़रूरत से ज़्यादे सख्त है, क्योंकि एक तरफ से तमाम शायरों को जहन्नुम रसीद कर

१. व्यर्थ। २. अनुचित। ३. न्यायाधीश। ४. अच्छाई बुराई। ५. न्याय। ६. पापी। ७. नरक। ८. बात का ढंग।

देने से बढ़कर सख्ती और क्या होगी ! लेकिन कहने का ढंग है कुछ ऐसा ही मज़ेदार जिसे सुनकर होठों पर मुस्कान दौड़ जाने के अतिरिक्त और कोई भावना पैदा ही नहीं होती। फिर किसी ने कहा है :—

सब विधि विधि सों कवि बड़े, यामें संशय नाहिं।
षट रस विधि की श्रृष्टि में, नव रस कविता माहिं॥

अब आपही बतलाइए जो हैं खुदा से बड़े, उनसे कौन लड़े ?

हाली साहब के इन विचारों को सुनकर किसी मनचले ने कहा है :—

सुना है फ़लक[१] से कि हाली मियाँ ने,
बनाया है ग़ालिब को उस्ताद अपना।
मगर एक रश्क़-क़मर[२] पर फ़िदा है।
फ़िदाए-खुदा[३] दूसरा बन रहा है॥

इस शेर से मालूम होता है कि ग़ालिब साहब मौलाना हाली के गुरू थे, किन्तु इन्होंने अवसर श्रृङ्गार रस के ही शेर कहे हैं। इनके दो चार शेरों का मज़ा आप ले सकते हैं :—

रात के वक्त मय[४] पिए, साथ रक़ीब[५] को लिए।
आए वो याँ खुदा करे पर न करे खुदा कि यों।

१— आसमान। २—चंद्रमुखी। ३—ईश्वर-भक्त। ४—शराब। ५—एक माशूक़ा के दो आशिक़ हों तो दोनों एक दूसरे के रक़ीब कहलाते हैं।

मैंने कहा कि बज़्मे[१] नाज़ ग़ैर[२] से चाहिये नहीं।
सुनकर सितम ज़रीफ़[३] ने[४] मुझको उठा दिया कि यों॥
गुंचए[५] नाशगुफ़्ता[६] को दूर से मत दिखा कि यों।
बोसे[७] को पूछता हूँ मैं मुँह से मुझे दिखा कि यों॥

× × × ×

जी चाहता है फिर वही फ़ुर्सत कि रात दिन।
बैठे रहें तसव्वुरे[८] जानाँ[९] किये हुये॥

× × × ×

आशिक़ी[१०] सब्र-तलब[११] और तमन्ना बेताब[१२]।
दिल का क्या रंग करूँ ख़ूने जिगर होने तक॥
हमने माना कि तग़ाफ़ुल[१३] न करोगे लेकिन।
ख़ाक़ हो जायेंगे हम, तुमको ख़बर होने तक॥
ग़मे हस्ती[१४] का "असद" किससे हो जुज़मर्ग[१५] इलाज[१६]।
शमा[१७] हर रंग में जलती है सहर[१८] होने तक॥

नोट— ग़ालिब का उपनाम (तख़ल्लुस) पहले "असद" था।

---

१ सभा। २ नखरा। ३ अत्याचार। ४ हँसोड़। ५ कली। ६ न खिला हुआ। ७ चुम्बन। ८ ध्यान। ९ माशूक़ा। १० धीरज चाहना। ११ इच्छा। १२ अधीर। १३ लापर्वाही। १४ ज़िन्दगी। १५ मरने के सिवा। १६ दवा। १७ दीपक। १८ सुबह।

आपके मरते वक्त का कलाम है :—

ये न थी हमारी क़िस्मत कि विसाले[1] यार होता।
गर और जीते रहते यही इन्तज़ार होता ॥

कहने को तो हाली साहब दिल तोड़ कर कह गए, लेकिन कहते वक्त यह ख्याल न रहा कि शायद खुदावन्द ने इनके शेर पर ग़ौर फ़र्माया और पकड़ पकड़कर एक तरफ़ से तमाम शोराओं को जहन्नुम रसीद करना शुरू करही दिया तो उस लपेट में इनके उस्ताद ग़ालिब साहब भी आए बिना न रह सकेंगे। खैर जो होगा अदालते खुदा में देखा जायगा। यहाँ मैं आपको अपने दोस्त मिस्टर "ज़िल्ले अल्लाह" साहब की दो कड़ियाँ सुनाता हूँ; जो कि हाली साहब के जवाब में बिल्कुल फ़िट बैठती हैं और मैं भी आपकी राय से सोलह आने पाव रत्ती सहमत हूँ :—

कुफ़र रीत क्या और इस्लाम रीत।
हर यक रीत[2] में इश्क़ का राज़[3] है ॥

फिर इस विषय में शौक़ी साहब की दो लाइनें क्यों छोड़ दी जायँ :—

जिन प्रेम-रस चाखा नहीं,
अमृत पिया तो क्या हुआ!
जिन इश्क़ में सर ना दिया,
जो जग जिया तो क्या हुआ !!

१ — मिलन। २ — ठीक। ३ — भेद।

हिन्दी के कवियों ने भी शृङ्गार-रस को ही प्रधान माना है, और कुछ लोग तो यह भी कहने के लिये तैयार हैं कि, काव्य-साहित्य की नींव ही शृङ्गार है और इसी के बल पर इसकी आलीशान इमारत बनी हुई है। किसी के ये सख़ुन भी क़ाबिले ग़ौर हैं :--

न हम अलग हैं न वो अलग हैं।
ख़ुदा का दिल है, ख़ुदाई बुत हैं॥

ख़ुदाई बन्दे ! ख़ुदा के बुत हैं।
ख़ुदा से मिलना हो बुत से मिल जा॥

एक साहब ने और फ़र्माया है :—

न हम बुत परस्ती अदा कर रहे हैं,
न माशूक़ कोई हमारा जहाँ में।
ख़ुदा की ख़ुदाई अयाँ[1] कर रहे हैं,
ज़बाँ दी है उसने बयाँ[2] कर रहे हैं॥

क्या बाल बाल बचकर निकल गये ! सफ़ाई इसको कहते हैं। ज़रा एक साहब की ज़ोरदार अपील और सुन लीजिए :—

मिलेंगे ख़ुदा से जो हम बादे-मुर्दन[3]।
करेंगे बयाँ कारनामे-बुताँ[4] हम॥
रुलाया इन्होंने सताया इन्होंने।
मुझे मारडाला जलाया इन्होंने॥

१. ज़ाहिर। २. बयान। ३. मरने के बाद। ४. बुतों की करतूत।

सच तो है! अगर ख़ुदा की चीज़ समझकर वह बेचारा बुतों को प्यार करता है, तो उनके द्वारा सताए जाने पर दावा करने कहाँ जायगा। तभी तो वह अपनी जिरह के लिये पेश कर रहा है :—

ख़ुदा के हम ख़ुदा के बुत,
ख़ुदा के गुल व गुलरू[1] भी।
ख़ुदा के ही इशारों पर,
बने बन्दे-बुतों[2] हम हैं॥

इस बेनज़ीर दलील के आगे सबके सब वक़लाने-ख़ुदा[3] अपना अपना सा मुँह लेकर रह जायँगे। हाली साहब की सारी दलीलें कट जायँगी और ख़ुदा अपने इशारों पर चलने वालों को हर्गिज़ जहन्नुम भेजने की जुर्रत नहीं कर सकेगा। लिहाज़ा बक़ौल एक दोस्त :—

न आशिक़ है कोई न माशूक़ कोई,
न क़ासिद कहीं को रवाना हुआ है॥
न बुत हैं बड़े ख़ूब सूरत जहाँ में।
फ़क़त शेर पर दिल दिवाना हुआ है॥
न ख़ंजर, न क़ातिल, न साक़ी कहीं है।
सुना शेर और झूम जाना हुआ है॥
क़फ़स है न बुलबुल, न माली चमन है।
ख़याली सभी कुछ बनाना हुआ है॥

१. सुन्दर मुख वाले। २. बुतों के दास। ३. ईश्वर के वकील।

मरा ना जिया कोई बुत की गली में।
न अब तक जनाज़ा उठाना हुआ है॥

न तुरबत किसी की सजी दस्ते-बुत[१] से।
न माशूक़ का आना जाना हुआ है॥

सख़ुन-गोई[२] के जल्वे हैं शायरों के।
न लैला व मजनूँ ज़माना हुआ है॥

हिंदी, संस्कृत, फ्रांसीसी, अंग्रेजी, नार्वेजियन, और जर्मन आदि साहित्य में जिसे "प्रतीक-वाद" अथवा Symbolistic literature कहा गया है, वह यही तो है। मीना, जाम, मय और साक़ी ये सब उर्दू शायरी में "प्रतीक" ही तो हैं। देखिए एक साहब फ़र्माते हैं :—

कब शीसा[३] लिया, जाम[४] लिया, साक़ी ने।
आँखों से फ़क़त[५] काम लिया साक़ी ने॥

बे मय पिए, जब क़दमों में लग़ज़िश[६] आई।
तो हँस के मुझे थाम लिया साक़ी ने॥

यहाँ तक तो हमने शृङ्गार रस को साहित्यिक एवं काव्य-दृष्टि से देखा, अब आइये ज़रा इसे धार्मिक दृष्टि से भी देखें। जब हम इस ओर धार्मिक-दृष्टि-पात करते हैं, तो यह बात मालूम होती है कि मनुष्य संसार की प्रत्येक वस्तु में परमपिता परमात्मा की

१— माशूक़ का हाथ। २— शेर कहना। ३— ग्लास। ४— शराब की मात्रा। ५— केवल, सिर्फ़। ६— लड़खड़ाहट।

शक्ति के-संचार का अनुभव करता है; अथवा संसार की प्रत्येक वस्तु में ईश्वर का स्वरूप देखता है और हिंदुओं में तो यह बात संस्कार से ही पाई जाती है। दूसरे रूप में — ईश्वर इस संसार रूपी बाग़ का माली है और एक बाग़ के माली का अपने लगाए हुये सुन्दर पौधों को बर्बाद करने वाले पर क्रोध करना और उनकी प्रशंसा करने वालों पर ख़ुश होना स्वाभाविक है; ऐसी हालत में इस संसार-रूपी बाग़ के पौधों की प्रशंसा करने वाले हमारे मनचले कवियों एवं शायरों पर ख़ुदा नाराज़ हो सकेगा, यह बात मानने को दिल हर्गिज़ तैयार नहीं होता।

इस प्रकार जब हम मौलाना हाली साहब के कलाम और शायरों के ऊपर लगाए हुये इल्ज़ाम के साथ उनके जवाब में लिखे गए शेरों पर ग़ौर करते हैं, तो हमें यह मानने के लिये मजबूर होना पड़ता है कि ख़ुदा ने इस दुनिया को बनाया है और यक़ीनन वह दुनिया की हरएक चीज़ों को प्यार करता है, ऐसी हालत में दुनिया की दिल-कश चीज़ों की तारीफ़ भला उसे क्योंकर नापसंद होगी ?

जहाँ हम श्रृङ्गार रस की चर्चा कर रहे हैं, वहाँ उसका वास्तिविक स्वरूप जान लेना भी आवश्यक है —

श्रृङ्गार रस कवियों या शायरों के मस्तिष्क से निकले हुए भावों का ऐसा समूह-मात्र है; जिसे वे अपने इष्ट-देव अथवा प्रिय-वस्तु के प्रेमोन्माद में मग्न होकर सरस एवं कर्ण-प्रिय भाषा में कहते हैं। इस प्रकार कही हुई कविताएँ निःसंदेह ऐसा असर रखती हैं, जो कि श्रोताओं अथवा पाठकों के कानों तक पहुँचकर उनके मस्तिष्क पर प्रभाव डालती हैं और हृदय को चंचल करके कवि के भावों में तल्लीन कर देती हैं। कवि की वाणी में

सदा यह गुण विशेष हुआ करता है,कि वह साधारणसी बात को भी जब कहता है तो ऐसे ढंग से कहता है कि हमें उसमें मनोरंजन के साथ साथ एक नवीनता झलकती है और उसके कहने में एक ऐसा अनूठापन होता है, जो कि हमें उसके भावों की गहराई तक खींच ले जाता है और हमें उसमें तन्मय हो जाना पड़ता है। मनोरंजन मनुष्य को स्वभावतः पसंद है और हमारी जीवन-चर्या के लिये यह है भी नितांत आवश्यक। मनोरंजन संसार के परे की कोई वस्तु नहीं है। जीवन-चर्या में समय समय पर होने वाली घटनाओं को ही लेकर कवि एक ऐसी रचना करता है, जो कि हमारे लिये मनोरंजन की चीज बन जाती है। कविता केवल मनोरंजन की ही चीज हो, ऐसी बात नहीं है। उससे हमें भक्ति, प्रेम,जीवन की समय समय पर होने वाली विशेष विशेष घटनाओं का उतार चढ़ाव,उनकी भलाई बुराई आदि बातों का ज्ञान सहज में ही प्राप्त हो जाता है, किन्तु यह ज्ञान मिलता है- मनोरञ्जक ढंग से और जो ज्ञान हमें मनोरंजक ढंग से मिलता है, उसे हम स्वभावतः शीघ्रग्रहण कर लेते हैं,क्योंकि ऐसे ज्ञान को प्राप्त करने में हमें थकावट का अनुभव नहीं होता,परिश्रम नहीं करना पड़ता। नित्य-प्रति होने वाली किसी साधारण घटना को लेकर जब कवि उसे मनोरंजक बनाना चाहता है, तो उसे उसमें श्रृङ्गार का पुट देना आवश्यक हो जाता है। यदि वह उसमें श्रृङ्गार का पुट नहीं देता तो उसकी रचना नीरस रह जाती है और ऐसी रचना मानव-हृदय में गुदगुदी पैदा करने में असमर्थ होती है, जिसके बिना मनोरंजन सर्वथा, असम्भव है।

अन्य रसों में प्रधान श्रृङ्गार रस की सहायता के बिना, भक्त-कवि भी अपने भक्त-काव्य लिखने में असमर्थ पाए गए

हैं। इस बात की पुष्टि के लिए, भक्त शिरोमणि श्री सूरदास का एक पद्य हम यहाँ उद्धृत करते हैं :—

आए कहँ रमा-रमन, ठाढ़ भवन, काज कवन ?
करौ गवन, वाके भवन, जामिनि जहँ जागे।
भृकुटी भइ अधोभाग, पल पल पर पलक लाग,
चाहत कछु नैन-सैन, मैन-प्रीति पागे॥
चन्दन वन्दन ललाट, चूरि-चिन्ह चारु ठाट,
अंजन - रंजित - कपोल, पीक लीक लागे।
नख-सिख लौं शिथिल गात, बोलत नहिं बनत बात,
चरन धरत परत अनत, आलस अनुरागे॥
अजन जावक कपोल, अधर सुधर मधुर बोल,
अलक उलटि अरजि रहीं, पाग-पेंच आगे।
तब छल नहिं छिपत छैल, छूटे कटि पीत चैल,
उरिया बिच मुक्त-माल, बिलसत बिनु धागे॥
सूरदास बनत आज, बरनत नहिं बनत साज।
निरखि निरखि कोटि कोटि, मनसिज मन ठागे॥

भक्त-काव्य के प्रधान लेखक श्री सूरदास के इस छंद में भक्ति-रस की जो गहराई हमें देखने को मिलती है; इसी छंद को शृङ्गार रस की दृष्टि से देखने पर हमें उससे भी कहीं अधिक गहराई में उतर जाना पड़ता है। कवि जिस समय अपने इष्ट-देव की प्रशंसा में तल्लीन होता है, वह उसका सुन्दरतम रूप देखना चाहता है और इस प्रकार सुन्दरतम स्वरूप देखने के लिये उसे अनिवार्य रूप के शृङ्गार की सहायता लेनी पड़ती है।

यह बात निर्विवाद रूप से मान ली गई है कि कवि बनाये नहीं जा सकते, वे तो पैदा होते हैं; अर्थात् कवि-मस्तिष्क ईश्वरीय देन है। स्वयं संसार रूपी बाग़ का माली कुछ इने गिने मनुष्यों को कवि बनाकर इसलिए भेजता है कि वे उसके लगाए हुए सुन्दर पौधों की ख़ूबियाँ साधारण जनता के सम्मुख मनोरंजक ढंग से समय समय पर उपस्थित करते रहें। ऐसी दशा में हम हाली साहब के कथनानुसार यह कैसे मान लें कि ख़ुदा की मर्ज़ी के माफ़िक चलने वाला कोई भी शायर उसकी निगाहों में गुनहगार हो सकता है ?

अंत में हम अपने पाठकों से इतना फिर कहना चाहते हैं कि पीछे कहे अनुसार कविता-कवियों या शायरों के मस्तिष्क से निकली हुई कुछ मज़ेदार छलकती हुई भावनाओं का समूह मात्र है, अस्तु हमें चाहिये कि हम उनके भाव वैचित्र्य और पद्य माधुरी का आनन्द लूटें, न कि उनके कलाम को पढ़कर आशिक़ माशूक़ बन कर दीवानेपन का नाटक करने लग जायँ। इसके विपरीत यदि किसी ने उल्टी दिशा की ओर क़दम रख ही दिया, तो हम समझेंगे कि बक़ौल हमारे एक दोस्त —

बाग़[१] में थे जो शज़र[१] फूल[३] गए।
शाख़[२] से हँस के समर[३] भूल[४] गए॥
ख़ुद हयूला[४] था मौज पर नासह।
हम भी जन्नत की ख़बर भूल गए॥

१— पेड़। २— डाल। ३— फल। ४— प्रकृति का तत्व।

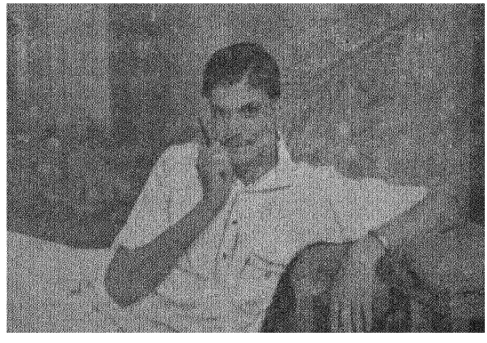
मंज़िले मुस्कान

कभी-कभी मंज़िले मक़सूद[1] तक पहुँचने के लिए इन्सान को सीधी सड़क छोड़ कर चक्करदार रास्तों से होकर गुज़रना पड़ता है। ऐसी ही कुछ मंज़िल मुस्कान को भी तय करनी पड़ी है।

मंज़िले मक़सूद तक पहुँचे हैं गो[2] हम घूमकर।
हैं मगर बेदाग़ निकले और पहला[3] चूमकर॥

मेरी ड्यूटी[4] ख़त्म हो चुकी है। अब यह काम हमारे क़द्रदान पाठकों का है कि वे 'मुस्कान' की मंज़िल को पहचानें, और पता लगाएँ कि इसकी किस मंज़िल में कौन सा राज़ छिपा है। लेकिन यह सब कुछ होना चाहिए—'मुस्कान' के साथ।

यह मेरी मुस्कान बस अब आपकी मुस्कान हो।
अहले आलम[5] हँस पड़े पूरा मेरा अरमान हो॥



[लेखक

१—लक्ष्य-स्थल। २—यद्यपि। ३—यह शब्द छोटे-छोटे बालकों द्वारा खेले जाने वाले आँख मिचौनी खेल से लिया गया है। "पहला" खेलाड़ियों द्वारा निर्दिष्ट वह स्थान कहलाता है, जिसे छू कर या चूम कर लड़के भागते हैं, एक लड़का उन्हें छूने को दौड़ता है। ४—कर्तव्य। ५—संसार-पारखी, ज़माने को पहचानने वाला।

अदालते-ख़ुदा

नवाबी का ज़माना था। अर्बी और फ़ारसी के तख़्त पर उर्दू यानी हिन्दुस्तानी ने अपना दबदबा क़ायम करना शुरू कर दिया था। उर्दू शायरी का बोलबाला था। यह बादशाही घरानों के अन्दर तक घुस गई थी; लेकिन ख़ुदा की शान! बेचारी ज़्यादे दिन तक अमीराने ठाट-बाट के साथ न रह सकी। ग़ैर हिन्दुस्तानियों ने हमला करके तीन चार नवाबियाँ हड़प कर लीं। हमारे एक हिन्दी के लेखक महोदय इस बात को न देख सके और ख़ुदावन्द ताला के इजलास में पहुँचकर चट एक दावा दायर कर दिया। दरख़ास्त हस्ब ज़ैल थी :—

ब अदालत शहंशाह आलम दो जहाँ।

आलम पनाह!

मैं कि हिन्दी लेखक, वल्द बा. साहित्य सेवक, क़ौम टीकाकार, तहसील कवितागंज, ज़िला साहित्य नगर, मुल्क हिन्दुस्तान का रहने वाला हूँ। हुज़ूर वाला में बनाम शायराने हिन्द यह दावा दायर करता हूँ कि बवजह इन नाक़ाबिल सख़ुनदाँ शायरान के अभी अभी हमारे मुल्क के कई चहचहाते हुये नवाबी चमन बियाबाँ हो गए और उन हुकूमतों पर फिरंगियों का क़ब्ज़ा हो गया। दुहाई आलम पनाह की! मुद्दई के दावे पर ग़ौर फ़रमाया जावे और फ़ैसला करके इन तमाम नुक़सानदेह शुअराए हिन्द को मुल्के अदम का हुक्म फ़रमाया जावे। वाजिबुल अर्ज़ है।

दस्तख़त — **हिन्दी लेखक**

ब तारीख़ नवाबी ज़माना। माह हिन्दुस्तानी। सन् अंग्रेज़ी हुकूमत।

मुस्कान



अदालते ख़ुदा

कुछ देर तक दरख़ास्त पर ग़ौर फ़र्माने के बाद हुक्म हुआ—उन तमाम शायरों के नाम मय वल्दियत व सकूनत के पेश करो जिनके नाक़ाबिल कलाम से हिन्दुस्तान पर क़हर नाज़िल हुआ है और अगर मालूम हो तो उनकी पैदायश व मरने का वक्त भी दर्ज करो ताकि इस बात का ठीक ठीक पता लगाया जा सके कि वे कब कहाँ किस काम के लिए भेजे गए थे और इस वक्त कहाँ होंगे। फिर वज़ीरे आज़म को ख़ुदाई ऐक्ट नं० पाँच खरब, दो अरब, सात लाख, एक हजार दो सौ एक के मुताबिक़ ख़ुदाइ अमनचैन में ख़लल डालने के जुर्म में तमाम शुअराओं पर मुक़द्दमा चलाने की हिदायत करते हुए आलम पनाह हरम ख़ाने के लिए रवाना हो गए।

लेखक महोदय ने हस्ब ज़ैल लिस्ट तैयार करके दर्बारे आलम पनाह में पेश की।

लिस्ट शुअराए हिन्द (मय नमूना अशार)

१— शाहवली अल्लाह "वली" वल्द व साकिन न मालूम। वक्त पैदायश व वफ़ात के लिये हुज़ूर अपना मर्दुमशुमारी का रजिस्टर देखने की तकलीफ़ गवारा करें।

चंद अशार पेश नज़र हैं :—

तुझ लब की सिफ़त[1] लाल[2] बदख़्शाँ[3] से कहूँगा।
जादू हैं तेरे नैन ग़ज़ाला[4] से कहूँगा ॥

१—ख़ूबी, करामात। २—मानिक, कीमती लाल रत्न। ३—एक देश का नाम जहाँ के लाल प्रसिद्ध हैं। ४—हिरन का बच्चा।

दी हक़[१] ने तुझे बादशाही हुस्न नगर की।
यह किश्वरे[२] ईराँ[३] में सुलेमाँ से कहूँगा॥

ज़ख्मी किया है मुझको जो पलकों की अनी ने।
यह ज़ख्म तेरा ख़ंजरे बुर्राँ से कहूँगा॥

बे सब्र हो न ऐ "वफ़ी" इस दर्द से हर गाह[४]।
जल्दी से तेरे दर्द की दरमाँ[५] से कहूँगा॥

हुज़ूर वाला यह वह शायर है, जिसने सब से पहले, लोगों को इस तरह के शेर लिखने का रास्ता बताया है।

२— शाह मुबारक "आबरू" वल्द न मालूम साकिन लापता।

नमूना अशार —

बोसा लबों का देने कहा कह के फिर गया।
प्याला भरा शराब का अफ़सोस गिर गया॥
क़ौल आबरूका था कि न जाऊँगा उस गली।
हो करके बेक़रार देखो आज फिर गया॥

३— शेख़ शर्फ़ुद्दीन "मज़मून" वल्द न मालूम। साकिन जाजमऊ। इलाक़ा अकबराबाद। पैदायश व फ़ौत का वक्त आपके रजिस्टर में दर्ज है।

१—ख़ुदा। २—देश। ३-ईरान मुल्क। ४--समय, वक्त, स्थान। ५--चिकित्सा, उपचार।

नमूना अशार :—

ख़ूबों[१] को जानता था गर्मी करेंगे मुझ से।
दिल सर्द हो गया है, जबसे पड़ा है पाला ॥१॥

अहवाल[२] पेशे[३] दिलवर कुछ मत कहो हमारा।
आता है नाम मेरा सुनकर उसे पसीना ॥२॥

चला कश्ती में जब आगे से वह महबूब[४] जाता है।
कभू आँखें भर आती हैं, कभी दिल डूब जाता है ॥३॥

४—सैयद मोहम्मद शाकिर "नाज़ी" साकिन दिल्ली।

नमूना अशार :—

हुआ जब आइने में जलवागर[५] मैं तब लिया बोसा।
जो आया अपने,काबू में तो फिर मुँह देखना क्या है ॥१॥

है ग़रज़ मिलने में न उल्फ़त[६] कुछ इस बेदर्द को।
पूछता है काने ज़र[७] आशिक़[८] के रंगे ज़र्द[९] को ॥२॥

रंग तेरा गंदुमी[१०] देख और बदन मख़मल सा साफ़।
होश खोकर आदमी भूलै है अपनी ख़िर्दी[११] ख़्वाब[१२] ॥३॥

१—सुन्दरियाँ। २—हालचाल। ३—सामने। ४—प्यारा।
५—प्रत्यक्ष। ६—लगन, चाह। ७—खदान। ८—सोना।
९—पीला। १०—गेहुंआँ। ११—बुद्धि। १२—स्वप्न।

५— गुलाम मुस्तफ़ा कुली खाँ; "यकरंग" साकिन दिल्ली।

नमूना अशार :—

रौनक़[१] इस्लाम तेरे रू[२] से है। कुफ़्र[३] का रिश्ता तेरे गेसू से है।
बेक़रारों के तईं आराम दिल। ऐ मेरे प्यारे तेरे पहलू से है॥
क्या जानिये विसाल[४] तेरा हो किसे नसीब।
हम तो तेरे फ़िराक़[५] में ऐ यार मर चले॥

६— शेख़ ज़हूरुद्दीन "हातिम" वल्द फ़तहउद्दीन। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश संवत् १७५५। वक्त वफ़ात सं. १८४८। दरे तुरबत दिल्ली दर्वाज़े के बाहर।

नमूना अशार :—

सरको पटका है कभू, सीना कभू कूटा है।
रात हम हिज्र[६] की दौलत से मज़ा लूटा है॥१॥
हिज्र की ज़िन्दगी से मौत भली।
कि जिसे सब कहें विसाल हुआ॥२॥
हर सुबह उठ बुतों से मेरा राम राम है।
ज़ाहिद[७] तेरी नमाज़ को मेरा सलाम है॥३॥

७— सिराजुद्दीन अली खाँ "आरज़ू" वल्द शेख़ हिसामुद्दीन रहसाम। दरे पैदायश आगरा। वक्त पैदायश सं. १७४९। वक्त वफ़ात सं. १८०१।

१— शोभा। २— चेहरा। ३— इस्लाम धर्म के विरुद्ध आचरण। ४—मिलन। ५—वियोग। ६—वियोग। ७—धर्मनिष्ठ।

नमूना अशार :—

गर ज़ुल्फ़ में लटक न रहे दिल तो क्या करे।
बेकार है अटक न रहे दिल तो क्या करे ॥ १ ॥

आता है हर सहर[१] उठ तेरी बराबरी को।
क्या दिन लगे हैं देखो ख़ुर्शीद[२] ख़ावरी[३] को ॥ २ ॥

उस तुन्द[४] ख़ू[५] सनम से जब से लगा हूँ मिलने।
हर कोई मानता है मेरी दिलावरी को ॥ ३ ॥

८— अशरफ़ अलीख़ाँ "फ़ुग़ाँ" वल्द व सकूनत वग़ैरह न मालूम।

नमूना अशार :—

उठ चुका दिल मेरा ज़माने से। उड़ गया मुर्ग़[६] आशियाने[७] से ॥

देखकर दिल को मुड़ गई मिज़गाँ[८]। तीर ख़ाली पड़ा निशाने से ॥
हमने पाया तो यह सितम पाया। इस ख़ुदाई के कारख़ाने से ॥

ज़ईफ़[९] है दिले बीमार इस क़रीने से।
अटक के आह निकलती है मेरे सीने से ॥

९— मिर्ज़ा जान जाना मज़हर, "मज़हर" वल्द मिर्ज़ा जान। साकिन काला बाग़ इलाक़ा मालवा। वक्त पैदायश सं. १७५४ वक्त वफ़ात सं. १८३६।

१—सुबह। २—सूर्य। ३—पूर्वी। ४—उग्र, तेज। ५—स्वभाव। ६—मुर्ग़ा। ७—घोंसला। ८—आँखों की पलकें। ९—वृद्ध।

नमूना अशार :—

क़यामत[1] मुझ पे कल की रात उसके हिज्र में लाई।
न आया यार मेरा आज भी वह रात फिर आई ॥ १ ॥
सुलेमाँ क्या हुआ गर तू नज़र आता नहीं मुझको।
मेरी आँखों की पुतली में तेरी तस्वीर फिरती है ॥ २ ॥

तबस्सुम[2] देख उस ग़ुंचा[3] दहन[4] का।
जिगर टुकड़े हुआ है हरकली का ॥ ३ ॥

१०—मिर्ज़ा मोहम्मद रफ़ी "सौदा" वल्द मिर्ज़ा मोहम्मद सफ़ी। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश सं. १७६८। वक्त वफ़ात सं. १८३७।

नमूना अशार :—

सौदा की जो बालीं[5] पे हुआ शोरे क़यामत।
ख़ुद[6] मे अदब बोले अभी आँख लगी है ॥ १ ॥
मुहब्बत के करूँ भुज-बल की मैं तारीफ़ क्या यारो।
सितम परबत हो तो उसको उठा लेता है जूँ राई ॥२॥
मेरी आँखों में तू रहता है मुझको क्यों रुलाता है।
समझकर देख ले अपना भी कोई घर डुबाता है ॥ ३ ॥

११—मोहम्मद तक़ी, "मीर" वल्द मीर अब्दुल्ला। साकिन आगरा। वक्त पैदायश सं. १७६८। वक्त वफ़ात सं. १८६५।

नमूना अशार —

इश्क़ हमारे ख़याल पड़ा है चैन गया आराम गया।
दिल का जाना ठहर गया है सुबह गया या शाम गया !!१!!

१—प्रलय। २—मुस्कान। ३—फूल। ४—मुख। ५—सिरहाना। ६—नौकर-चाकर।

वस्लो हिजराँ से जो दो मंज़िल हैं राहे इश्क़ की।
दिल ग़रीब उनमें ख़ुदा जाने कहाँ मारा गया ॥ २॥
जफ़ाएँ देख लिया बेवफ़ाइयाँ देखीं।
भला हुआ कि तेरी सब बुराइयाँ देखीं ॥ ३ ॥

१२—ख़्वाजा मीर "दर्द" वल्द ख़्वाजा मोहम्मद नासिर। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश सं. १७७२। वक्त वफ़ात सं. १८४०।

नमूना अशार—

अगर वह बुत किसी सूरत से मेरा राम[1] हो जाए।
तो पूजूँ इस यक़ीन[2] से कि कुफ्र इस्लाम हो जाए॥
हरेक दम साँस होकर फाँस मुझ दिल में खटकती है।
अगर जाँ की ख़लिश[3] निकले तो क्या आराम हो जाए॥
तेरी तिर्छी निगाहों ने रखा है नीमबिस्मिल कर।
अगर फिर कर नज़र देखे तो मेरा काम हो जाए॥

१३— सैयद मोहम्मद मीर "सोज़" वल्द सैयद ज़ियाउद्दीन। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश संवत् १७८४। वक्त बफ़ात सं. १८५४।

नमूना अशार —

अगर मैं जानता है इश्क़ में धड़का जुदाई का।
तो महशर[4] तक न लेता नाम हर्गिज़ आशनाई का॥

१—आज्ञाकारी। २—विश्वास। ३— तड़प, कसक। ४—प्रलय।

ख़ुदाया किसके हम बन्दे कहावें सख़्त मुश्किल है।
रखे है हर सनम[१] इस दहर में दावा ख़ुदाई का॥
ख़ुदा की बन्दगी का, "सोज़" है दावा तो ख़िलक़त[२] को।
वले[३] देखा जिसे बन्दा है, अपनी ख़ुदनुमाई[४] का॥

१४— शेख़ कलंदर बख़्श, "जुर्रत" वल्द हाफ़िज़ अमान। साकिन दिल्ली। वक्त फ़ौत व पैदायश अपने रेकार्ड में देखने की तकलीफ़ गवारा करें।

नमूना अशार हस्ब ज़ैल हैं:—

सोज़े दिल से हाल यह था शब तेरे ग़मनाक का।
सुबह बिस्तर पर जो देखा ढेर था यक ख़ाक का॥

आलमपनाह ग़ौर फ़र्मावेंगे — झूठ की हद हो गई! ख़ाक हो जाने के बाद कोई देखेगा कैसे? माशूक़ा से भी झूठ बोलना कितनी बड़ी ग़लती है।

१५—मीर ग़ुलाम हुसेन, "हसन" वल्द मीर ग़ुलाम हुसेन साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश सं. १७९२। वक्त इन्तक़ाल सं. १८४२।

नमूना अशार :—

जी निकलता है इधर और वह गुज़र करता नहीं।
मरते हैं हम और उसे कोई ख़बर करता नहीं॥
कौनसी वह रात जाती है कि जिसमें तेरे बिन।
शाम से जूँ शमा रो रो मैं सहर करता नहीं॥

१—ज़माना, युग। २—सृष्टि। ३—लेकिन। ४—आत्म प्रशंसा।

देखिए हुज़ूर अपने साथ साथ ख़ुदाई के और भी आदमियों को परेशान किए रहना क्या एक नया जुर्म नहीं है ! इसके लिए एक आदमी हमेशा बुतों के पास ख़बर ले जाने वाला चाहिए।

१६— सैयद इन्शा, अल्लाख़ाँ, "इन्शा" वल्द हकीम मीर माशा-अल्ला खाँ। साकिन दिल्ली। वक्त न मालूम।

नमूना अशार: —

रखते हैं कहीं पाँव तो पड़ता है कहीं और।
साक़ी ज़रा ले थाम तो तू हाथ हमारा ॥१॥

क्या ख़ुदा से इश्क़ की मैं रूनुमाई[1] माँगता।
माँगता भी उससे तो सारी ख़ुदाई माँगता ॥२॥

दयामय देखिए, इन्हें कभी कुछ देने को न कह बैठिएगा नहीं तो सारी ख़ुदाई पर हाथ साफ़ कर देंगे और ले जाकर हम लोगों को बुतों के हवाले कर देंगे।

१७—ग़ुलाम हमदानी, "मसहफी" वल्द वली मोहम्मद। साकिन अमरोहा। दरे तुरबत लखनऊ। वक्त पैदायश तक़रीबन सं. १८००। वक्त वफ़ात सं. १८८०।

नमूना अशार :—

आँख सीधी नहीं करता कि मुक़ाबिल[2] हो निगाह।
आरसी[3] नाज़ से देखैं हैं वो शरमाए हुए ॥
उसके कूचे से जो उठ आते हैं हम दीवाने।
फिर उन्हीं पाँवों चले जाते हैं बौराए हुए ॥

१—मुँह-दिखाई। २—सामने। ३—दर्पण।

१८—"नज़ीर" वल्द न मालूम। साकिन ताजगंज।

नमूना अशार :—

वो मुझको देख कुछ इस ढब से शर्मसार हुआ।
के मैं फ़क़त हया पै जाँ निसार हुआ ॥ १ ॥
सभी को हँस के दिए बोसे औ हमें गाली।
हज़ार शुक्र भला इस क़दर तो प्यार हुआ ॥ २ ॥
सब मिलके यारो कृष्ण मुरारी की बोलो जै।
गोविन्द छैल कुञ्ज बिहारी की बोलो जय ॥
दधि-चोर गोपीनाथ बिहारी की बोलो जय।
तुम भी "नज़ीर" कृष्ण मुरारी को बोलो जै ॥
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूँ मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन ॥

दुहाई आलम पनाह की देखिए, मुसलमान होकर हिन्दू-कृष्ण की जै बोलना क्या गुनाह नहीं है।

१९—इमाम बख़्श "नासिख़" वल्द ख़ुदा बख़्श। साकिन लखनऊ

नमूना अशार :—

बाम[1] पर नंगे न आओ तुम शबे महताब[2] में।
चाँदनी पड़ जायगी मैला बदन हो जायगा ॥
तायरे-रूह[3] को कर देते हैं क्योंकर विस्मिल।
तीर रखते हैं परी-रू[4] न कमाँ रखते हैं ॥ २ ॥

१—छत। २—चाँदनी रात। ३—पक्षीरूपी आत्मा। ४—परीमुख

२०–ख्वाजा हैदर अली, "आतिश" वल्द ख्वाजा अली बख्श। साकिन लखनऊ।

नमूना अशार :—

तड़पते हैं न रोते हैं न हम फ़रियाद करते हैं।
सनम की याद में हरदम ख़ुदा को याद करते हैं॥
उन्हीं के इश्क़ में हम नालवो फ़रियाद करते हैं।
इलाही देखिए किस दिन हमें वो याद करते हैं॥
शबे फ़ुर्क़त में क्या क्या साँप लहराते हैं सीने पर।
तुम्हारे काकुले पेचाँ को जब हम याद करते हैं॥

नया यह जज़बए-दिल[1] औ नई तासीर[2] उल्फ़त से।
हमें वह भूल बैठे हैं जिन्हें हम याद करते हैं॥

२१—शेख़ मोहम्मद इब्राहीम, "ज़ौक़" वल्द शेख़ मोहम्मद रमज़ान साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश सं. १८४३। वक्त वफ़ात सं. १९०१।

नमूना अशार :—

जो फ़रिश्ते करते हैं कर सकता है इन्सान भी।
पर फ़रिश्तों से न हो जो काम है इन्सान का॥
देखना ऐ "ज़ौक़" होंगे आज फिर लाखों के ख़ून।
फिर जमाया उसने लाले लब[3] पै लाखा पान का॥

देखिए हुज़ूर बाला, बुत को फ़रिश्तों से भी ज्यादे ताक़तवर साबित कर दिया।

१—दिल का जोश। २—असर। ३—अधर, ओष्ठ।

२२—नजमुद्दौला दबीरुलमुल्क मिर्ज़ा असदुल्लाखाँ, "ग़ालिब" वल्द अब्दुल्ला बेग़। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश १८५३ वक्त वफ़ात सं. १९२६।

नमूना अशार :—

इशरते[१] क़तरा[२] है दरिया में फ़ना[३] हो जाना।
दर्द का हद से गुज़रना है दवा हो जाना ॥१॥
न लुटता दिन को तो कब रात को यों बेख़बर सोता।
रहा खटका न चोरी का दुआ देता हूँ रहज़न[४] को ॥२॥
शब को किसी के ख़्वाब में आया न हो कहीं।
दुखते हैं आज उस बुते नाज़ुक बदन के पाँव ॥३॥

२३—मोमिन ख़ाँ "मोमिन" वल्द हकीम ग़ुलाम नबी ख़ाँ। साकिन दिल्ली। वक्त पैदायश १८५६। वक्त वफ़ात १९०७।

नमूना अशार :—

नावक[५] अन्दाज़ जिधर दीदए-जानाँ[६] होंगे।
नीम बिस्मिल कई होंगे कई बेजाँ होंगे ॥१॥
ख़ुशी न हो मुझे क्यों कर कज़ा[७] के आने की।
ख़बर है लाश पै उस बेवफ़ा के आने की ॥२॥

२४—पं. दयाशंकर क़ौल "नसीम" वल्द पं. गंगाप्रसाद क़ौल।

१—आनन्द। २—बूँद। ३—मिटना। ४—लुटेरा। ५—तीर। ६ दृष्टिपात। ७—मृत्यु।

साकिन लखनऊ। वक्त पैदायश सं. १८६८। वक्त वफ़ात सं. १९००।

नमूना अशार :—

बुतों को जो देखा गुनह[1] क्या हमारा।
ख़ुदाई ख़ुदा की तमाशा हमारा॥
बुतों की गली छोड़कर कौन जाए।
यहीं से है क़ाबे को सिजदा[2] हमारा॥१॥

शरीक[3]-बज्म[4] हुए हो तो दूर कीजे हिजाब[5]।
जो निकले नाचने फिर क्या लेहाज़[6] घूँघट का॥२॥

२५—मौलवी मुफ़्ती मुंशी अमीर अहमद मीनाई, "अमीर" वल्द मौलवी करम मोहम्मद। साकिन लखनऊ। वक्त पैदायश सं० १८८४। वक्त वफ़ात सं. १९५७।

नमूना अशार :—

दिल मुझ से लिया है तो ज़रा बोलिए हँसिए।
चुटकी में मसलने के लिए दिल नहीं होता॥१॥

ख़त उस आरिज़[8] का जब से छुप गया है मेरी नज़रों में।
निगह यों आँख में चुभती है काँटा जैसे छाले में॥२॥

पाक[9] दामन हो तो अरमाने विसाल अच्छा है।
अच्छी नीयत हो तो अच्छों का ख़याल अच्छा है।

२६—नवाब मिर्ज़ा ख़ाँ "दाग़" वल्द न मालूम। साकिन दिल्ली।

१—पाप। २—दण्डवत। ३—सम्मिलित। ४—सभा। ५-लज्जा ६-शर्म। ७-निशान। ८-गाल। ९—पवित्र। १०—अंचल।

वक्त पैदायश सं. १८८८। वक्त वफ़ात सं १९९२।

नमूना अशारः—

वो दिल लेके चुपके से चलते हुए।
यहाँ रह गए हाथ मलते हुए ॥ १ ॥
ज़रा दाग़ के दिलपै रक्खो तो हाथ।
बहुत तुमने देखे हैं जलते हुए ॥ २ ॥
रंज वह रंज है जिसमें न बुतों को भूलें।
ऐश वह ऐश है जिसमें न खुदा याद रहे ॥ ३ ॥
जिसमें लाखों बरस की हूरें हों।
ऐसी जन्नत का क्या करे कोई ॥ ४ ॥

हुज़ूर वाला! क्या यह महफ़िले आलम पनाह की तौहीन नहीं है कि जन्नत की हूरों को हिक़ारत की निगाह से देखा जावे और बुतों को प्यार किया जावे।

२७—मौलाना शाह अब्दुल अलीम "आसी" वल्द न मालूम। साकिन सिकन्दरपुर जिला बालिया। वक्त पैदायश १८९०। वक्त वफ़ात सं. १९७३।

नमूना अशार :—

इश्क़ कहता है कि आलम से जुदा हो जाओ।
हुस्न कहता है जिधर जाओ नया आलम है ॥ १ ॥
घट गई वस्ल में फ़ुर्क़त में बढ़ी थी जितनी।
रात आशिक़ की कभी दिन के बराबर न हुई ॥ २ ॥
जान दो दिन की है मेहमान सताते क्यों हो।
आप रोते हुए आए हैं रुलाते क्यों हो ॥ ३ ॥

२८—सैयद अकबर हुसेन रिज़वी "अकबर" वल्द सैयद तफ़ज्जुल हुसेन। साकिन बारा। जिला इलाहाबाद। वक्त पैदायश सं. १९०३। वक्त वफ़ात सं. १९७८।

नमूना अशार :—

ज़रासी देरही हो जायगी तो क्या होगा।
घड़ी घड़ी न उठाओ नज़र घड़ी की तरफ़ ॥ १ ॥
जो घर में पूछे कोई ख़ौफ़ क्या है कह देना।
चले गए थे टहलते हुए किसी की तरफ़ ॥ २ ॥
क़स्द करता हूँ जो उठने का तो फ़र्माते हैं वो।
और बैठो दो घड़ी साहब कि घबराता है दिल ॥
यह नहीं कहते यहीं रह जाओ अब तुम रात भर।
बस इन्हीं बातोंसे "अकबर" मेरा जलजाता है दिल ॥३॥
पूछता है जब कोई उनसे किसे है तुम से इश्क़।
देखते हैं प्यार से शरमा के अकबर की तरफ़ ॥४॥

लिपट भी जा न रुक "अकबर" ग़ज़ब की ड्यूटी[2] है।
नहीं नहीं पै न जा यह हया की ड्यूटी[2] है ॥ ५ ॥

हुजूर ग़ौर फ़र्मा हों किस क़दर लोगों को बरगलाया जा रहा है।

२९—पं ब्रजनारायण चकबस्त "चकबस्त" वल्द न मालूम। साकिन लखनऊ। वक्त पैदायश सं. १९३९। वक्त वफ़ात सं. १९८३।

नमूना अशार :—

ये वह राम[3] है कि जिसकी परवरिश[4] दिल खूब करता है।

---

१ — सौन्दर्य। २ — कर्तव्य। ३—रंज। ४—पालन-पोषण।

ज़बाँ तक ला नहीं सकता हूं शिकवे[1] बेवफ़ाई के ॥१॥
गराँ[2] है जिन्स और नीयत ख़रीदारों की अबतर[3] है।
अब इस बाज़ार में उल्फ़त का सौदा हो नहीं सकता॥
जिसे है फ़िक्र मरहम की उसे क़ातिल समझते हैं।
इलाही ख़ैर हो यह ज़ख्म अच्छा हो नहीं सकता ॥२॥

३०— सर मोहम्मद इक़बाल "इक़बाल" वल्द न मालूम। साकिन स्यालकोट। वक्त पैदायश सं. १९३३। वक्त वफ़ात सं. १९९४।

नमूना अशार :—

चमक तेरी अयाँ[4] बिजली में आतिश[5] में शरारे[6] में।
झलक तेरी हुवैदा[7] चाँद में सूरज में तारे में॥
जो है बेदार[8] इन्साँ में वो गहरी नींद सोता है।
शजर[9] में फूल में हैवाँ में पत्थर में सितारे में॥
मुझे फूँका है सोज़े क़तरए अश्के[10] मुहब्बत ने।
ग़ज़ब की आग थी पानी के छोटे से शरारे[11] में॥

१—शिकायत। २—महँगी। ३—ख़राब। ४—व्यक्त, प्रकट। ५—आग। ६—स्फुलिंग, चिनगारी। ७—प्रगट, स्पष्ट। ८—जागृत। ९—वृक्ष। १०—आँसू। ११—चिनगारी।

खुदावन्द का कोप

जिस वक्त आलम पनाह के सामने लिस्ट पेश हुई; सभी लोगों की आँखें उनके चेहरे पर गड़ गईं, लोगों ने मार्क किया— ज्यों ज्यों फ़ैज-गञ्जूर लिस्ट पर नज़र दौड़ाते थे, त्यों त्यों उनके चेहरे पर ग़ुस्से की सुर्ख़ी दौड़ रही थी। पूरी लिस्ट पढ़ते ही उनका बदन क्रोधावेश में कम्पायमान हो उठा। वे रोष के आवेश में पैर पटककर खड़े हो गए और ज़ोर से चिल्ला उठे:— दर्बान! दर्बान काँपता हुआ दस्तबस्त: हाज़िर हुआ। हुक्म मिला, यमराज को इसी वक्त हाज़िर करो। इस बेतुके हुक्म को सुनकर वक्त के पहिले ही लोगों को प्रलय की आशंका होने लगी। दर्बान ने थोड़ी देर बाद लौटकर जवाब दिया— हुज़ूर आज़म! यमराज जी किसी की जान निकालने गए हैं। इतनी देर में खुदा वन्द का होश ज़रा रास्ते पर आ चुका था। ग़लती को महसूस करते हुए बोले — यह तो मुझे पहले ही मालूम था। ब्रह्माजी को बुला लाओ।

जिस वक्त दर्बान ब्रह्माजी के कार्यालय में पहुँचा, उस वक्त ब्रह्मा जी युद्ध के योग्य कुछ अच्छे तगड़े मर्दों की रचना में व्यस्त थे। किन्तु करते क्या हुक्म सुनते ही उसी वक्त चल देना पड़ा। पहुंचते ही खुदावन्द ने लिस्ट सामने रखते हुये कहा—आप इसी वक्त अपना मर्दुमशुमारी का रजिस्टर देखकर बतलाइये कि ये लोग फ़िल हाल कहाँ होंगे, ताकि मैं आज ही इनके नाम सम्मन जारी करा सकूँ।

ब्रह्माजी ने विनम्र होकर कहा— त्रिलोकीनाथ! कदाचित आपको ज्ञात न हो; इस समय भूमण्डल में भीषण विश्वव्यापी युद्ध छिड़ा हुआ है। वहाँ करोड़ों मनुष्य नित्य रणचंडी की भेंट हो रहे हैं। अस्तु, मैं युद्धोपयोगी नर रत्नों की रचना में विशेषतयः

व्यस्त हूँ। इदि इस कार्य को कुछ दिनों के लिए स्थगित रक्खा जाय तो विशेष सुविधा होगी।

त्रिलोकीनाथ ने समझाते हुए कहा — ब्रह्मा जी! संसार युद्ध के चक्कर में आप न पड़िए। इन लोगों की तो आदत पड़ गई है लड़ाई मोल लेते रहने की! देखिए न! पहले महाभारत हुआ, फिर महा-युद्ध हुआ, अब बिश्व-युद्ध छिड़ गया। बताइए इस तरहके नये-नये युद्धोंको आप कहाँ तक मदद देते रहेंगे! किन्तु यह मसला जो दर पेश है, नेहायत ज़रूरी है। विश्वयुद्ध में तो प्रतिदिन बहुत मरते होंगे लाखों करोड़ों कट मर जाते होंगे; फिर जब लड़ने वाले सिपाही सभी मर जायेंगे तब युद्ध अपने आप बन्द हो जायगा। लेकिन यहाँ तो एक एक नज़र में लाख लाख ख़ून हो रहे हैं। अगर इसी तरह की मारकाट चालू रही तो सारी ख़ुदाई नेस्त नाबूद हो जायगी, फिर किस पर हम शासन करेंगे और कहाँ तक आप आदमी बनाएंगे? देखिए न! लेखक जी बता रहे हैं कि अभी अभी हाल ही में तीन चार नवाबियाँ बर्बाद हो गईं। ब्रह्माजी की समझ में क्या और कितना आया सो तो ब्रह्माजी ही जानें, पर वे और अधिक मुँह लड़ाए बिना लिस्ट लेकर चले गए।

ख़ुदा वन्द ने वज़ीरे आज़म को हुक्म दिया—ब्रह्माजी के यहाँ से इन लोगों का पता मिल जाने पर सबके नाम आज ही सम्मन जारी किया जाय। हुक्म सुनाते हुए ख़ुदावन्द तआला हुरम ख़ाने के लिए क़दम रंजः फ़र्माते हुए लेखक जी से कह गए-आप तीन दिन के बाद तशरीफ़ लाइए।

बयान शायराने हिंद

पेशी के दिन अल्लाह ताला (त्रिलोकीनाथ) का इजलास दर्शकों से खचाखच भरा हुआ था। ऐसे दिलचस्प मोक़दमे का समाचार जिसने सुना वही घर-बार, काम-काज छोड़कर दौड़ पड़ा।

पहले पेशकारे ख़ुदा ने शायराने हिंद को लेखक जी का अर्ज़ीदावा पढ़कर सुनाया। इसके बाद वज़ीरे आज़म-ख़ुदा ने शोराए हिंद को मुख़ातिब करते हुए फ़र्माया — आपलोगों ने लेखक जी का दावा सुन लिया, अब मैं बहुक्मे ख़ुदा आप लोगों से सवाल करता हूँ कि ख़ुदाई ऐक्ट नं. पाँच खरब दो अरब छै करोड़ सात लाख एक हजार दो सौ तीन के मुताबिक़ ख़ुदाई अमन चैन में ख़लल डालने के जुर्म में क्यों न आप लोगों के नाम मुल्के अदम का हुक्म जारी किया जावे।

आप लोगों में से कोई भी एक शख़्श बतौर नुमायन्दा शोराए हिंद अपनी सफ़ाई पेश करता है।

एक शायर ने जिसको पहले ही से शोराए हिंद ने मीटिंग करके नुमायन्दः मुन्तख़िब कर लिया था; इस प्रकार बयान देना शुरू किया—बज़ीरे आज़म ख़ुदा व आलम पनाह! लेखकजी का यह दावा सिवाय हस्दन दायर होने के और कोई अहमियत नहीं रखता, चूंकि हमारी उर्दू ज़बान कुछ ऐसी शीरीं, आम फ़हम व दिल फ़रेफ़्ता है, चूँकि उसमें वह फ़साहत, वह नफ़ासत, वह लताफ़त है और मोहावरों की बहुतायत व मज़मून का तर्ज़े बयान कुछ इस ढंग का है कि यह ज़बान मामूली बोलचाल के वक्त भी काफ़ी मज़ेदार मालूम पड़ती है, फिर हमारे शोराए हिंद ने शीरीं

सख़ुन के साथ साथ सीधी सादी ज़बान में महावरों का कुछ ऐसा मज़ेदार स्तेमाल अपने अशआर में करना शुरू कर दिया है कि जो सुनता है वही एक एक शेर पर हज़ार हज़ार जान से क़ुर्बान हुए बिना नहीं रहता और रही उर्दू ज़बान के मज़मून की बात उसे तो "जो सुनता है उसी की दास्ताँ मालूम होती है।" ऐसी हालत में क़ुदरत का तक़ाज़ा है कि लेखक जी को इससे हसद पैदा हुई हो और वे बिला वजह हुज़ूरे आज़म के दर्बार में हमारे अशआर को नाक़िस क़रार देकर हमेशा के लिए उसे हिंद बदर करवा देने की फ़िक्र में हों! रही बात बर्बादिए नवाबी हुकूमत की– उसका ताल्लुक़ तवारीख़ से है। किसी भी हुकूमत के बनने बिगड़ने की ज़िम्मेदारी शेर, सख़ुन या शायर पर हर्गिज़ नहीं हो सकती। उसकी ज़िम्मेदारी हुक्कामे हुकूमत पर होना लाज़िम है। आप अगर मोकम्मिल तवारीख़-हिंद पढ़ने की तकलीफ़ गवारा करें तो बर्बादिए नवाबी के वजूहात से आगाह हो सकते हैं। अगरचे मान भी लिया जाय कि बवजह उर्दू अश्आर नवाबी हुकूमतों को धक्का लगा है, तो मुझे यह कहने में कोई दिक्कत तलब न होगी कि हिन्दू हुकूमतें भी बवजह हिंदी शायरान बर्बाद हुई होंगी; क्योंकि हिन्दी का शृङ्गार उर्दू के आशिक़ माशू-क़ाना शेरों से कहीं आगे बढ़ा हुआ है। बतौर नमूना कुछ हिन्दी अशआर पेशे नज़र हैं। इतना कहते हुये शोराए हिंद के नुमायन्दा ने एक लिस्ट वज़ीरे आज़म के हाथ में पकड़ा दी जो कि निम्न प्रकार थी—

ख़तरनाक हिंदी अशार

अँगुरिन उच, भरु भाँति दै, उलकि चितै चख लोल।
रुचि सों दुहूँ दुहून के, चूमे चारु कपोल॥

बिहँसति सकुचतिसी दिए, कुच आँचर बिच बाँह।
भीजे पट तट को चली, न्हाय सरोवर माँह॥ १॥
सोन जुही सी जग मगै, अँग अँग जोवन जोति।
सुरँग कुसंभी कंचुकी, दुरँग देह दुति होति॥ २॥
लरिका लैबे के मिसन, लाँगुर मो ढिग आय।
गयो अचानक आँगुरी, छाती छैल छुआय॥ ३॥

हज़ूर ग़ौर फ़र्मा हों क्या बिहारीलाल का यह तीसरा दोहा तरीक़ए छेड़ छाड़ का रहबर क़रार नहीं दिया जा सकता? ज़रा आलम-पनाह एक मशहूर हिंदी शायर "देव" की इस कविता का मतलब समझने की कोशिश करें :—

आज गई हुती कुंजन लौं,
बरसैं उत बूंद घने घन घोरत।
"देव" कहैं हरि भींजत देखि,
अचानक आय गए चित चोरत॥
पोटि भटू तट ओट कुटी के,
लपेटि हिए सों कटी पट छोरत।
चौगुनो रंग चढ़ो चित पै,
चुनरी के चुचात लला के निचोरत॥

और देखिए—

आजु मिले बहुतैं दिन भावते, भेंटत भेंट कछू मुख भाखौ।
ये भुज-भूषन, मो भुज बाँधि, भुजा भरिकै अधरा रस चाखौ॥

लीजिए लाल उढ़ाय जरी पट, कीजिए जू जिय जो अभिलाखौ।
प्यारे हमैं तुम्हैं अन्तर पारत, हार उतारि इतै धरि राखौ॥

अब "पद्माकर" जी की नई आँख मिचौनी भी देखने की तकलीफ़ गवारा करें :—

दोऊ छबि छाजतीं छबीली मिलि आसन पै,
जिनहिं बिलोकि रह्यो जातना जितै जितै।
कहैं "पदमाकर" पिछौं हैं आई आदर सों,
छलिया छबीलो छैल बासर बितै बितै॥
मूँदे तहाँ एक अलबेली के अनोखे दृग,
मुदृग मिचावनी के ख्यालन हितै हितै।
नैसुक नवाइ ग्रीवा धन्य धन्य दूसरी को,
औचक अचूक मुख चूमत चितै चितै॥

ज़रा "सेनापति" की खुली बहार पर भी नज़र दौड़ाने की मेहरबानी फ़र्माई जावे :—

नवल किसोरी भोरी केसर तैं गोरी छैल
होरी मैं रही है मद जोबन के छकि कै।
चंपे कैसे ओज, अति उन्नत उरोज पीन,
जाके बोझ खीन कटि जाति है लचकि कै॥
लाल है चलायो, ललचाई ललना कौं देखि,
उघरारों उर, उर-बसी ओर तकि कै।
"सेनापति" सोया कौ समूह कैसे कह्यो जात,
रह्यो है गुलाल अनुराग सौं झलकि कै॥

घनानंद जी की यह चीज़ भी समझने लायक है—

रति रंग राते प्रीति पागे रैन जागे नैन,
आवत लगेई घूमि झूमि छबि सों छके।
सहज बिलोल परे, केलि की कलोलन में,
कबहूँ उमगि रहे कबहूँ जके थके॥
नीकी पलकनि पीक लीक झलकनि सोहै,
रस ललकनि उनमद न कहूँ सके।
सुखद सुजान घन आनँद पुषत प्रान,
अचरजि खान उघरे हूँ लाज सों ढके॥

क्या "मतिराम" जी की यह कविता क़ाबिले दाद नहीं है? ज़रा हुज़ूरे आज़म ग़ौर फ़र्मा हों :—

जगमगे जोबन अनूप तेरो रूप चाहि,
रति ऐसी रंभा सी रमा सी बिसराइए।
देखिबे को प्रान प्यारी पास प्रान प्यारो खरो,
घूँघट उघारि नेकु बदन दिखाइए॥
तेरे अंग अंग में मिठाई औ लुनाई भरी,
"मतिराम" कहत प्रगट यह पाइए।
नायक के नैनन में नाइए सुधा सों सब,
सौतिन के लोचनन लौन सों लगाइए॥

आलम पनाह को तकलीफ़ तो ज़रूर हो रही होगी; लेकिन "यशवंत सिंह" का ख़्वाब भी क़ाबिले दीद है:—

लै सपने अपने मन की दुलही उलही छबि भाग परी सी।
अंक निसंक सों लै परियंक लला मुख चूमि सुचारु धरीसी॥
यों लपटी चिपटी हिय सौं जसवंत विशाल प्रसून झरी सी।
नैनन के खुलते वह मूरति पास परी उड़ि जात परी सी॥

मुस्कान



कोयल सी काली, चाल नहीं उसकी मतवाली।

अब मैं हुज़ूर का ज्यादे वक्त ज़ाया न करके 'निराला' जी का एक निराला शैर लिखकर खत्म करता हूँ। अगर आलम पनाह को इतने से तसल्ली न होगी तो मैं और नमूने पेश करने की कोशिश करूँगा। आली जाह ग़ौर फ़र्मा हों :—

बम्हन का लड़का,
मैं प्यार उसे करता हूँ।
जात की कहारिन वह,
मेरे घर की पनहारिन वह,
आती है होते तड़का,
उसके पीछे मैं मरता हूँ।
कोयल-सी काली,
चाल नहीं उसकी मतवाली—
ब्याह नहीं हुआ तभी भड़का,
दिल मेरा, मैं आहें भरता हूँ।
रोज जगाती है आ सबको,
सिर्फ़ समझता मैं इस ढब को;
ले जाती है मटका बड़का,
मैं देख देख धीरज धरता हूँ।

हालाँकि मैं तो इस ढब को कुछ नहीं समझ सका और न शोराए हिंद में से कोई भी शायर इस अजीब व ग़रीब ढब को समझने की जुर्रत रखता है, लेकिन उम्मीद है कि अगर सिर्फ़ निराला जी ने इस ढब को समझ लिया है तो आलम पनाह ज़रूर समझ गए होंगे।

उलट पलट

नुमायन्दः, शोराए हिंद लिस्ट पेश करके चुपचाप खड़ा नीची निगाहों से खुदावन्द का चेहरा बग़ौर देखता रहा। उसने देखा— ज्यों ज्यों अल्लाह ताला लिस्ट को पढ़ते थे उनके चेहरे की रंगत बदलती जाती थी। ज्योंही उन्होंने पूरी लिस्ट ख़त्म करके सर उठाया, नुमायन्दः बिला उन्हें कुछ बोलने का मौक़ा दिए ख़ुद बोल उठा — आलम पनाह! गुस्ताख़ी माफ़ हो तो बन्दा कुछ और अर्ज़ करने का ख्वाहाँ हो। ख़ुदावन्द ने कुछ अनमने से होकर कहा— कह सकते हो। नुमायन्दः ने बा अदब सर झुका कर कहा — जहाँ पनाह जान की बख़्शिश चाहता हूँ। कहने में ज़बान लड़खड़ाती है। हुज़ूर की शान में ..... "क्या कहा हुज़ूर की शान में कुछ कहना चाहते हो?" वज़ीरे आज़म बोल उठे। "मैं नहीं कहना चाहता। क्योंकि बात सच होते हुए भी ....." कहते कहते नुमायन्दा रुक गया। वज़ीरे आज़म ने तसल्ली देते हुये कहा, "तुम्हें मालूम होना चाहिए कि तुम इस वक्त ख़ुदावन्द की अदालत में खड़े होकर बोल रहे हो, यह अदालते हिन्द नहीं है। यहाँ जो कुछ कहो साफ़ साफ़ कहो। बे ख़ौफ़ो ख़तर होकर कहो। सच बोलने वाला यहाँ पनाह पाता है, न कि सज़ा।"

नुमायन्दः ने एक कागज़ वज़ीरे आज़म के हाथ में देते हुए कहा— आलम पनाह ख़ुद पढ़ लें, मैं सरे दर्बार सुनाने की जुर्रत नहीं कर सकता।

लिखा था—

ब्रह्म मैं ढूँढ्यो पुरानन कानन,
वेद-रिचा सुनि चौगुने चायन।

देख्यो सुन्यो न कबौं कितहूँ ,
वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन ॥
टेरत हेरत हारि थक्यो ,
"रसखान" बतायो न लोग लुगायन ।
देख्यो दुर्यो वह कुंज कुटीर में ,
बैठो पलोटत राधिका पायन ॥

क्या "रसखान" के ये सख़्त आलम-पनाह की शान के ख़िलाफ़ नहीं हैं ? क्या हुज़ूरे आज़म को आड़ लेकर ऐसे नाक़िस कलाम कहने वाले क़ाबिले ज़िला-वतन नहीं हैं ? क्या ऐसे हिंदी अशआर इस बात के पक्के सुबूत नहीं हैं कि हिन्दी शायर, शहंशाह मख़लूकात को भी बदनाम करने में आगा पीछा नहीं सोचते ?

अपने प्रति ऐसी अपमान-जनक कविता को पढ़कर कमला पति का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। एक बार फिर प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित हो गया। उन्होंने क्रोधातिरेक में लेखकजी की ओर आग्नेय नेत्रों से देखा। यह अन्याय बामांग पर विराजमान "हर हाईनेस" से न देखा गया। उनका मातृ-हृदय दया से द्रवित हो गया इसलिए. अथवा रसखान-लिखित घटना उन्हें सत्य प्रतीत हूई हो इसलिए – उन्होने तेजी से कहा, " इसमें मुहई का क्या दोष है ? पहली बात तो यह है कि यह कविता "रसखान" की है। इसकी सचाई झुठाई के लिए आप रसखान से जवाब तलब कर सकते हैं। दूसरी बात यह है कि आप स्वयं अपनी मर्यादा का ध्यान नहीं रखते। जबकि बाशिंदगाने हिंद बड़ी शान के साथ कहते हैं—

बुलावा था नहीं मेरा न पहुँचे इससे महफ़िल में।
ख़ुदा के घर भी जाना बे बुलाए ना मुनासिब है ॥

तो आप ख़ुद ख़ुदा होकर बार बार उनके यहाँ क्यों दौड़े जाते हैं। अभी क्या हुआ है! अगर आपने मेरा कहना न माना और इसी तरह आना जाना जारी रक्खा तो हिंद वाले इससे भी बढ़ बढ़कर लांछन आपके सिर मढ़ेंगे। इसी से तो मैं धीरे धीरे हिंदुस्तान से अपना हाथ खींचे ले रही हूँ।

त्रिलोकीनाथ से कुछ कहते सुनते न बना। बेचारे चुप रह गए। मौक़ा देखकर मुद्दई का वक़ील आगे बढ़कर बोला, "श्रीमान आउट ऑफ़ लॉ" * जा रहे हैं। क़ानूनन हिंदी काव्य का मामला तब तक नहीं उठाया जा सकता जब तक कि उसके ख़िलाफ़ कोई दावा दायर न हो। देखिए ख़ुदाई ऐक्ट नं. पचपन लाख, छप्पन हजार, सत्तावन सौ, अंठावन। ख़ुदावन्द क्रोध में तो थे ही, लक्ष्मी जी भी ज़बाँ दराज़ी के आगे उनकी न चल सकी तो क्या अब एक मामूली वकील से दब जाते! डाँटकर बोले, "चुप रहो। यह अदालते ख़ुदा है। यहाँ दूध, पानी अलग अलग करके रख दिया जाएगा। सच बात कहने में ऐक्ट फैक्ट कैसा!"

वज़ीरे आज़म ने गंभीरता पूर्वक कहा, "आलम पनाह आप ग़लती पर हैं। सच हो या झूठ, कानून की पाबंदी तो करनी ही पड़ेगी।" तो क्या मुझे भी कानून के मातहत रहना पड़ेगा?— ख़ुदा वन्द ने कुछ ग़ुस्से और दुःख के साथ कहा।

वज़ीरे आज़म ने मौक़े को सम्हालते हुए कहा, "यों तो क़ानून के अन्दर सबको रहना चाहिए, लेकिन इस वक्त मतलब यह है कि आपको दौरान मुक़दमे में क़दम क़दम पर क़ानून का ख्याल रखना चाहिए।"

---

* क़ानून के ख़िलाफ़।

"तो यह क़ानून किसने बनाया कि सच बात भी तब तक न सुनी जाय जब तक कि उसके ख़िलाफ़ मोक़दमा दायर न हो ?" ख़ुदावन्द ने भड़के हुए स्वर से कहा।

रसखान की कविता ने लक्ष्मी जी के दिल में बग़ावत तो पैदा कर ही दी थी। वे भरी हुई बैठी थीं मौक़ा पाकर बोल उठीं :—

औरों पै मौतरिज़ थे अपनी जो आँख खोली।
अपने ही दिल को हमने गंजे अयूम पाया॥
उतनीही दुश्वार अपने ऐब की पहिचान है।
जिस क़दर करनी मलामत और को आसान है॥

आपको इतनी तक तो ख़बर नहीं है कि कौन कौन से क़ानून आपकी अदालत में बन चुके हैं और कहाँ कहाँ उनका ध्यान रखना चाहिए। मालूम भी कैसे हो ! जब दौड़ दौड़ कर हिन्दुस्तान जाने से फ़ुर्सत मिले तब न !

यद्यपि लक्ष्मीजी ने ग़ुबार निकाला था रसखान की कविता का, किंतु क़ानून की आड़ लेकर।

इस बार सरे दर्बार त्रिलोकीनाथ अपना अपमान सहन न कर सके और ज़रा झिड़क कर बोले, "अच्छा अच्छा चुप रहो समझ लिया कि तुम भी उर्दू की कविता जानने लगी हो।"

"अगर उर्दू की कविता पढ़ना लिखना या सुनना आपके क़ानून में कोई जुर्म हो तो मेरे ऊपर भी एक मोक़दमा दायर करवा दीजिए।" कहती हुई लक्ष्मी जी ग़ुस्से में उठकर चल दीं।

वज़ीरे आज़म ने इन तमाम व्यर्थ के बखेड़ों को बन्द करने की ग़रज़ से मिसल उठाई और नुमायन्दः शोराए हिंद से सवाल किया, "तुम्हारे पास क्या इसके लिए कोई सुबूत है कि तुम्हारी उर्दू ज़बान को बवजह होने शीरीं व दिल फ़रेफ़्ता, सभी लोग पसंद करते हैं ?"

अब शायरों का वक़ील आगे बढ़ा। उसने मानो बड़े विश्वास के साथ कहा— हुज़ूरे आज़म इसका सबसे बड़ा सुबूत तो आपको अभी अभी इसी इजलास में मिल चुका है कि ख़ुद हर हाईनेस को उर्दू ज़बान के शेर इतने पसंद आए कि उन्होंने अपनी गुफ़्तगू में उसका इस्तेमाल किया। दूसरी बात यह है कि हिंदी के लेखक और प्रकाशक ख़ुद हमारे शेरों को अपने अख़बार में छापते हैं और हिंदी ज़बान में मज़मूअए उर्दू अशार की किताबें भी साया करते हैं। बवजह पसंद आने हर आम व ख़ास के उनकी बिक्री भी अच्छी होती है।

वज़ीरे आज़म ने फिर सवाल किया— तुम इसके लिए क्या सफ़ाई देना चाहते हो कि नवाबी हुकूमतें बवजह उर्दू अशार बर्बाद नहीं हुईं ?

वक़ील ने ज़रा मुस्कराहट के साथ लापर्वाही दिखाते हुए कहा— मुद्दाअलेह को सफ़ाई देना उसी वक्त ज़रूरी हो सकता है जबकि मुद्दई के दावे में कोई जान हो ! "इसका मतलब" वज़ीरे आज़म ने ज़रा रोब के साथ कहा।

वकील ने आज़ादी से जवाब दिया — हुज़ूरे आज़म नाराज़ न हों। फिर मुद्दई के वकील को मुख़ातिब करके बोला— आपके पास इस बात का क्या सुबूत है कि नवाबी हुकूमतों को बवजह उर्दू अशआर नुक़सान पहुँचा है ? मुद्दई के वकील ने चंद

काग़ज़ात वज़ीरे आज़म की तरफ़ बढ़ाते हुए कहा — आलम पनाह ख़ुद देखेंगे कि एक पाक-रूह, नेक-चलन आदमी बवजह उर्दू अशआर क्योंकर पक्का शराबी बन जाता है और आख़ीर में मुफ़लिस होकर कौड़ी-कौड़ी के लिए मोहताज होकर घूमता फिरता है।

उन काग़ज़ों को रखते हुए बहुक्म ख़ुदा, आगे की पेशी देकर वज़ीरे आज़म ने बहस रोक दी। नक़ल लेने पर मालूम हुआ कि उन काग़ज़ों का मज़ामून हस्ब ज़ैल था :—

मयकशी

नवाबी ज़माने में हमारे एक दोस्त थे। वे बेचारे कभी पीते-वीते तो थे नहीं! एक रोज़ ज़रा टहलने के लिए मयख़ाने तक चले गए। देखकर तबीयत चल आई, तो आप साक़ी से बड़े मज़े में कहते हैं :—

ला दे दे ज़रा साक़ी थोड़ी सी आज पी लूँ।
पीने में मज़ा क्या है! क्यों लोग पी रहे हैं॥

साक़ी को क्या था! उसने चटपट ढालकर हाथ में प्याला पकड़ा दिया। लेकिन हाथ में प्याला आते ही आपका हाथ काँपने लगा, तो पक्के पियक्कड़ों की निगाह से अपनी इस कमज़ोरी को छिपाने के लिए कहते हैं :—

बेख़ुदी[1] का हो बुरा हाथ ही क़ाबू में नहीं।
दी भी साक़ी ने तो सागर[2] से गिरी जाती है॥

१— आत्म-विस्मृति, अपने आपको भूल जाना। २— प्याला।

फिर आप साक़ी से कहते हैं: —

तेरे सदक़े[1] मेरे होठों से लगा दे साग़र।
तेरे क़ुर्बां[2] मुझे आता नहीं पीना साक़ी॥

इनकी बात सुनकर इनके दोस्त वायज़ साहब ने ज़रा बढ़ावा देते हुए कहा :—

पीते हो झिझकते भी हो फ़स्ले बहार में।
तुम भी निसार आदमी हो किस ख़याल के॥

बस फिर क्या था! आँख बंद की और गले के नीचे उतार गए। जब आँख खोली तो सामने एक पड़ोसी बैठा हुआ नज़र आया। उसे देखकर आप ज़रा सहम से गए और कहते हैं :—

ज़रा सी आज ये वायज़ के ज़िद से पी ली है।
मुदाम[3] हम बख़ुदा[4] वरना बेगुनाह रहे॥

लेकिन इनके पड़ोसी नामाक़ूल ने जाकर मुहल्ले भर में बात फैला दी। जब ये पहुंचे तो लोगों ने इन्हें छेड़ना शुरू कर दिया। अब तो ये बड़े परेशान हुए। जब लोगोंका मुँह बन्द करने का इन्हें कोई उपाय न सूझा तो बिगड़ कर बोले :—

क्यों हश्र[5] है ये बर्पा[6], थोड़ी सी जो पी-ली है।
डाका तो नहीं डाला चोरी तो नहीं की है॥

बस एक ही फटकार में सब लोग अपना-अपना-सा मुँह लेकर रह गए। फिर क्या था जनाब बेख़ौफ़ो ख़तर मयख़ाने में

१—बलिहार जाना। २—न्यौछावर होना। ३—हमेशा। ४—ईश्वर की सौगन्ध। ५—प्रलय। ६—उपस्थित।

आने-जाने लगे और आलमपनाह के यहाँ आकर इस गुनाह के लिए क्या जवाब देंगे यह भी सोच लिया :—

मय[1] की बाबत हश्र में पूछेगा मुझसे गर कोई।
साफ़ कह दूँगा कि पहले आप पीकर देखिये॥

एक दिन साक़ी ने शराब देने में ज़रा देर की। मयकशों को इतना सब्र कहाँ! आप कहने लगे :—

फ़िक्रे मीना[2] क्यों है साक़ी? क्यों तलाशे जाम[3] है?
तू लगादे मुंह से ख़ुम[4] पीना हमारा काम है॥

एक रोज़ ज़रा मयख़ाने में कुछ सुस्ती सी दिखाई दी तो आप साक़ी से पूछते हैं :—

आज क्या मर गया साक़ी कोई पीने वाला?
क्यों उदासी सी है छाई हुई मयख़ाने में॥

जब ज़रा चढ़ी तो लगे झूम-झूमकर साक़ी की अदाओं पर मस्त होने। तब तो आपको साक़ी की निगाहों में ही सब कुछ दिखने लगा :—

आँख तुम्हारी मस्त भी है और मस्ती का पैमाना भी।
एक छलकते साग़र में मय भी है और मयख़ाना भी।

फिर उसकी आँखों को देखकर कहने लगे :—

आके मयख़ाने पै बरसेगी ज़रूर।
आज मस्ती पर है ये काली घटा॥

१— सृष्टि का अन्तिम दिवस, क़यामत का दिन, जबकि सब मुर्दे उठ खड़े होंगे और उनके कार्यों का लेखा होगा। २ — सुराही। ३—प्याला। ४—घड़ा।

फिर अपने बग़ल में बैठे हुये मीर साहब के ऊपर झूम कर चश्मे-साक़ी की तरफ़ इशारा करके बोले —

मीर इन नीम-ख़्वाब[1] आँखों में ।
सारी मस्ती शराब की सी है ॥

[illegible] जब ज़रा कसकर चढ़ी तो साक़ी को मुख़ातिब करके लगे झूम-झूमकर कहने —

साक़ी तू दिए जा मय, जिस जिसको दिया चाहे ।
सब में वो सोहागिन है, जिसको कि पिया चाहे ॥
तू आज दुआ मेरी, साक़ी जो लिया चाहे ।
इस ढब की पिला दे मय, पीते ही पिया चाहे ॥
जब जान लिया तुझको, पहचान लिया तुझको ।
फिर किस पै ये दिल रीझे, फिर किसको जिया चाहे ॥
दिल पास था जो मेरे, दिलवर को दिया मैं ।
अब जान भी हाज़िर है, जानाँ जो लिया चाहे ॥
मय पीते हैं मस्ताने, हम इश्क़ के दीवाने ।
क़ाबे[2] को तू मयख़ाना, करदे जो किया चाहे ॥ १ ॥

मीर साहब ने कहा, पी चुके हो तो चलो चलें। लेकिन इनकी तबियत अब जल्दी कहाँ भरती थी— कहने लगे :—

साक़ी जो मेहरबाँ है, तो पीने का ज़िक्र क्या !
निकलूँगा मैक़दे[3] से नहा कर शराब में ॥

मीर साहब ने कहा यार बहुत पीने लगे हो। तो आप बड़े फ़ख्र के साथ कहते हैं :—

१—आधीखुली, (नीम=आधी) । २—मुसलमानों का सब से बड़ा तीर्थ स्थान । ३—मदिरालय ।

मुझ रिन्द[1] को बनाना था भट्ठी शराब की।
इन्साँ बनाके क्यों मेरी मिट्टी ख़राब की॥ २॥

फिर मीर साहब से कहते हैं —

पीजिए मय डर फ़रिश्तों[2] का नहीं।
बादलों से बन्द राहें हो गईं॥

इतना कहकर साक़ी को इशारा किया :—

तुन्द[3] मय और ऐसे कमसिन[4] के लिए ?
साक़िया हल्की सी ला इनके लिए॥

इस बेतुकी बात पर मीर साहब को बड़ा ग़ुस्सा आ गया और बिगड़कर बोले :—

तुमने मुझको क्या समझ रक्खा है रिन्द !
तुन्द या हल्की हो मय का ज़िक्र क्यों ?

वह तो एक साहब ने ज़रा सम्हाल लिया वरना धर-पटक की भी हो जाती। उन्होंने मीर साहब को तसल्ली देते हुए कहा:—

बहकते न थे ये कभी गुफ़्तगू[5] में।
मगर पी गए आज हज़रत ज़ियादह॥

इतने में साक़ी ने एक प्याला शराब लाकर इन्हें और दी। कस कर चढ़ी हुई थी। झोंक में इन्हें शराब पानी की तरह दिखने लगी और प्याले को भी ये गिलास समझ बैठे। ग़ुस्से में आकर

१—मतवाला, मस्त। २—देव-दूतों। ३—तेज, उग्र, तीव्र। ४—अल्प वयस्क, कम उम्रवाला। ५—बातचीत।

प्याला ज़मीन पर पटक दिया और कहने लगे :—

बजाय मय दिया पानी का यक गिलास मुझे।
समझ लिया मुए साक़ी ने बदहवास मुझे॥

बस इतना कहकर आप पिनपिनाते हुए चल दिए। रास्ते में कहीं शेख़ जी मिल गए। देखते ही इन्होंने सोचा, कहीं कुछ कहें न! इसलिए पहले ही से फटकार बैठे :—

ऐ शेख़! बताए जो मए इश्क़ को हराम।
ऐसे को दो लगाए भिगोकर शराब में॥

लेकिन इस वक्त शेख़ जी को दूर की सूझी और यह सोचकर, कि कहीं यह जूती मेरे ही सिर न पड़े, इन्हें खुश करने के लिए कह पड़े :—

गर कोई मिलता ख़ुदा को वक्त पर अच्छा मुसीर[१]।
दूध पानी कुछ न होते, यक फ़क़त[२] होती शराब॥

शेख़ जी की बात सुनकर तो इनका दिल बढ़ गया और कहने लगे —हाँ जनाब! यह ऐसी ही चीज़ है —

फिर रहे हैं रोज़ मय के वास्ते शम्सो[४] क़मर[३]।
बदनसीबी देखिए चखने को भी मिलती नहीं॥

और शेख़जी! यह वह चीज़ है कि —

अंगूर में थी यह मय, पानी की चार बूँदें।
जिस दिन से खिंच गई है तलवार बन गई है॥

शेख़ जी ने धीरे से कहा — हाँ! तभी तो मयकशों की गर्दन

१— मशवरा देने वाला, सम्मति-दाता। २—सिर्फ़, केवल। ३—चाँद। ४—सूरज।

पर चल रही है ! निसार जी ज़रा और मस्ती में आए तो शेख़ जी की गर्दन से झूमकर कहते हैं :—

लुत्फ़[१] मय तुझसे क्या कहूँ वायज़[२] ।
आह कमबख़्त ! तूने पी ही नहीं ॥
पीके देखो तो हाल खुल जाए ।
शेख़ पूछो न कुछ मज़ा क्या है ॥
करते हैं मयकशी भी तो आन-बान से ।
पीते नहीं उधार किसी की दुकान से ॥

शेख़जी ने ज़रा कुछ और सुनने की ख़्वाहिश से इनकी पीठ ठोंकी और कहा — मज़ा तो भाई पीने वाले ही जानें लेकिन यह बड़ा अच्छा करते हो कि उधार नहीं पीते और नक़दी पीने में तो कोई गुनाह भी नहीं है ।

जब इन्होंने देखा कि शेख़जी ज़रा ख़ुश हैं, तो सोचा कि इन्हीं के सामने जन्नत का रास्ता भी साफ़ कर लेना चाहिए, तो कहते हैं :—

पीता नहीं शराब को मैं बेवज़ू[३] किए ।
क़ालिब[४] में मेरी रूह[५] किसी पारसा[६] की है ॥
शब[७] को मय ख़ूब पी ली, सुबह को तोबा कर ली ।
रिन्द के रिन्द रहे हाथ से जन्नत[८] न गई ॥

१— आनन्द । २— उपदेशक । ३— नमाज़ पढ़ने के पहले शुद्धिके लिए बिना हाथ पाँव धोए । ४— शरीर । ५—आत्मा । ६—सदाचारी । ७— रात । ८— स्वर्ग ।

रात भर तो रिन्द रहते हैं 'जलील'।
सुबह को कुछ और हो जाते हैं हम !!

फिर जान-बूझकर भी नहीं पिया था :—

मैंने तलब[1] किया था महफ़िल[2] में जामे-आब[3]।
साक़ी ने लाके सामने हाज़िर शराब की ॥

ठीक तो है ! अब ऐसे में बेचारे का क्या दोष था ? ऐसे ही मौक़ों पर तो आपद्-धर्म बचाने के लिए लोगों को सब कुछ करना पड़ता है। शेख़ जी को अब अपनी जान छुड़ाने की पड़ी थी, इसलिए इतना कहकर चल दिए :—

जवानी के आलम में पीना है अच्छा।
कहाँ फिर जवानी कहाँ मयकशी है ॥

इधर हज़रते मयकश झूमते हुये आगे बढ़े तो लड़खड़ा कर एक अच्छे ख़ासे उम्दा पुरआब नाले में जा गिरे। वहाँ भी साक़ी ने आपका साथ न छोड़ा। बड़ी शान से आपने गिगिया के हुक्म दिया :—

ला साक़िया सिताब सुराही शराब की।
रुखाहिश अँधेरी रात में है आफ़ताब[4] की ॥

लेकिन वहाँ नाले में इनकी कौन सुनता ! जब कोई जवाब न मिला तो ज़रा खुशामदाना लहजे में बोले :—

चार दिन की ज़िन्दगी साक़ी किए क्यों बदमज़ा।
जाम छलके मय ढले बोतल खुले साग़र चले ॥

---

१ — माँगना। २ — सभा। ३ — पानी का गिलास। ४ — सूर्य।

फिर भी कोई जवाब न मिला तो खीझकर कहने लगे :—

ऐसी जन्नत को आग लग जाए ।
जिसमें है बुत न साक़िया कोई ॥

लीजिए आप उसी नाले को जन्नत समझ बैठे । तभी तो फिर कहते हैं :—

मुझको जन्नत से जहन्नुम ही कहीं अच्छा है ।
जहाँ न मय की कमी औ न साक़िया की कमी ॥

इतना कहकर आप उठना ही चाहते थे कि मुंह के बल कीचड़ में गिर पड़े, तो फिर कहते हैं :—

आँख साक़ी की छलकता हुआ पैमाना बने ।
मैं जहाँ झूम के बैठूँ वहीं मयख़ाना बने ॥

पता नहीं, इसी तरह बकबकाते हुए वहाँ कब तक पड़े रहे, किसने इन्हें उठाया और कैसे घर पहुँचे ? लेकिन कई साल बाद एक रोज़ सुना, यही जनाब कह रहे थे :—

यारब शराबख़्वार भी मुफ़लिस कभी न हो ।
अंगूर सूँघता हूँ मैं बरसों सड़े हुए ॥

और आपका यह दावा था —

तरदामनी[1] पै शेख़ हमारी न जाइयो ।
दामन निचोड़ दें तो फ़रिश्ते वज़ू करें ॥

---

१ — भीगा दामन ।

दूसरी पेशी

दूसरी पेशी पर दोनों पक्ष पूरी तैयारी के साथ उपस्थित हुए। बहस के लिए मुद्दई-मुद्दालेह खड़े ही हुए थे कि ब्रह्माजी ने आकर बिनती की :—

त्रिलोकीनाथ! मेरा सब काम चौपट हो जायगा। लक्ष्मी जी ने विश्वकर्माजी को बड़ा पेचीदा काम सौंप दिया है। वे मेरे कार्यालय में कल से नहीं पहुँचे।

त्रिलोकीनाथ ने आश्चर्य से पूछा — ऐसा कौन सा काम आ पड़ा?

ब्रह्माजी ने बतलाया—दया-निधान! उनको आज्ञा हुई है, एक ऐसा यन्त्र तैयार करने की, कि जिसके द्वारा वायुमंडल में गूँजते हुए शब्दों को एकत्रित किया जा सके। उस यंत्र का नाम होगा "ध्वनि-आकर्षण-यंत्र"। उसके द्वारा वे कुछ पौराणिक कविताएँ एकत्र करना चाहती हैं।

त्रिलोकीनाथ ने धीमे स्वर से कहा — यह काम तो फ़ुर्सत के वक्त भी हो सकता है।[1]

इतने में लक्ष्मीजी आ धमकीं। उन्होंने हिज़हाईनेस का वाक्य सुन लिया। ब्रह्माजी को देखकर उन्हें मामला समझने में देर न लगी। डाँटकर बोलीं—नहीं, यह काम अभी होगा। यदि लेखकजी का मुक़दमा विश्व-युद्ध से अधिक आवश्यक है, तो मेरा यह कार्य उससे भी अधिक आवश्यक है।

सरकारी वकील ने बाअदब सर झुकाकर कहा — हरहाईनेस[2] अनाधिकार चेष्टा कर रही हैं। विश्वकर्मा को ब्रह्माजी

१—महाराज। २—महारानी।

का ऑफ़िस[1] तब तक नहीं छोड़ना चाहिए जब तक कि हिज़-हाईनेस[2] का रिटिन[3] ऑर्डर[4] न प्राप्त हो जाय ! देखिए खुदाई[5] ऐक्ट[6] नं० ज़ीरो[7]। लक्ष्मीजी ने फटकारा — चुप रहो गुस्ताख़ कहीं के। तुम्हें अभी मेरा प्रभाव नहीं मालूम। मुझे देखते ही अच्छे अच्छों के ऐक्ट-फैक्ट, क़ानून-क़ायदे सब ताक़ में धरे रह जाते हैं। मैं जहाँ रहती हूँ मनमानी काम करती हूँ।

सरकारी वकील की नानी मर गई।

त्रिलोकीनाथ ने कलेजा कड़ा करके पूछा— आख़िर इस वक्त 'ध्वनि-आकर्षण-यंत्र' की इतनी क्या आवश्यकता आ पड़ी है ? कुछ तो धर्म की ओर ध्यान दो। देखो भारतवर्ष में इस समय आदमियों की सख्त ज़रूरत है। ब्रह्माजी का बड़ा नुक़सान हो जायगा।

लक्ष्मी जी ने कुपित- स्वर से कहा — मैंने दया-धर्म तो सीखा ही नहीं। जहाँ मैं रहती हूँ, वहाँ दया-धर्म का नाम-निशान मिटा देती हूँ। वह तो केवल तुम्हारे बाँट में पड़ी है। तुम्हीं उसके साथ मौज करो। देखो ये भारतवासी सभ्यता के पुजारी कहलाने वाले मेरे ऊपर भी कीचड़ उछालने से नहीं चूकते। ज़रा सुनिए रहीम ने मेरी कैसी चुटकी ली है :—

कमला थिर न रहीम कहि, यह जानत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय॥

अब त्रिलोकीनाथ चापलूसी करने पर तुल गए; मुस्करा-कर बोले- भई, तुम तो समझीं नहीं ! यह तो जाईफ़ों का ज़िक्र है,

---

१—कार्यालय, दफ़्तर। २—महाराज ! ३—लिखित। ४—आज्ञा। ५—ईश्वरीय। ६—क़ानून या दफ़ा। ७—शून्य।

यानी वृद्ध-विवाह का तज़किरा है। जिसमें बूढ़े लोग विवाह न किया करें।

लक्ष्मी जी का स्वर, न ढीला हुआ और न ठंडा। उन्होंने पहले ही के स्वर में तेज़ी के साथ कहा— कुछ हो, मैं तो अब इन लोगों की एक-एक कविता का पता लगाए बिना न रहूँगी। विश्वकर्मा जब तक मेरा यन्त्र नहीं बना देगा दूसरा काम नहीं कर सकता— कहती हुई वे विश्वकर्मा की कारीगरी देखने चली गईं। आज वे इजलास में नहीं बैठीं। त्रिलोकीनाथ ने क़ानून की रक्षा के लिए विश्वकर्मा को ऑफिस छोड़ने का रिटिन ऑर्डर दे दिया। मुक़द्दमे की कार्यवाही आरम्भ हुई। पहले मुद्दालेह के वक़ील ने दलील पेश की— आलमपनाह! मुद्दई का यह दावा सरासर झूठ है कि उसके दोस्त को उर्दू अशआर ने शराबी बना दिया। वह अपने बयान में ख़ुद मंज़ूर करता है कि उसका दोस्त एक रोज़ मयख़ाने तक घूमने चला गया। वहां और लोगों को देखकर उसकी तबीयत मचल गई। इसमें शायरी का कोई क़ुसूर नहीं है। दूसरी बात यह है कि पब्लिक को इश्क़ के चक्कर से बचाने के लिए हमेशा अपनी शायरी में हमारे शुअराए हिंद, माशूक़ाओं को क़ातिल, बेरहम, ज़ालिम, मक्कार, नाफ़र्मांबरदार और क़ाफ़िर वग़ैरह-वग़ैरह कहते आए हैं। साथ ही साथ लोग उनसे डरते रहें इसीलिए उनकी आँखों को अनी की नोक, बर्छी, भाला, तीर, तलवार वग़ैरह-वग़ैरह बतलाते रहे हैं।

मसलन — तेग़ बुर्रां खींचने से फ़ायदा।
हाँ ज़रा इन अब्रुओं से काम लो॥

और भी —

आँख बर्छी की अनी थी जो सम्हाली न गई।
जब पड़ी सीने पै मेरे कभी ख़ाली न गई॥

इसके अलावा शुअराए हिन्द, हमेशा आम पब्लिक को आगाह करते रहे हैं कि बुतों के चक्कर में कोई न पड़े, क्योंकि इनकी याद करने वाला अपनी बर्बादी कर लेता है। उसके लिए सिवा मरने के फिर कोई रास्ता नहीं रह जाता। हमारे शायरों ने साफ़ साफ़ कह दिया है —

इस इश्क़ के मकतब[1] में मिलता है सबक़ पहले।
गर वस्ल की ख्वाहिश हो हस्ती को फ़ना[2] करना॥

इतने पर भी अगर कोई मिस्ल परवाना अपनी जान देने के लिए कूद पड़े, तो इसके लिए हमारे शुअराए हिन्द हर्गिज़ जवाब-देह नहीं हो सकते।

फिर परवाने को यह बात भी मद्दे नज़र रखनी चाहिए—

तड़पा परवाना तो क्या शम्आँ को आराम रहा!
उसे भी तो रात भर जलना ही पड़ा।

बावजूद होने इतनी बातों के, ऐसा नहीं है कि सभी आशिक़ों को क़ब्र का ही रास्ता देखना पड़ता हो। कभी-कभी उनकी मुरादें पूरी भी हो जाती हैं। जैसा कि हस्ब लैल मजनूँ से साबित है :—

१—स्कूल, मदरसा। २—बर्बाद।

खुश तक़दीर

चलते हैं, ठहरते हैं, गिरते हैं, सम्हलते हैं।
उल्फ़त के ये दीवाने क्या क्या नहीं करते हैं॥

यह कोई हैरतअंगेज़ बात नहीं है। जो उल्फ़त के लम्बे रास्ते पर क़दम बढ़ाएगा उसे सभी कुछ करना पड़ेगा। ताहम इस रास्ते में पड़कर अगर किसी को परेशानी का सामना करना पड़े, तो इसमें हमारे शुअराए हिन्द का कोई क़ुसूर नहीं है क्योंकि वे तो बराबर आगाह कर रहे हैं —

यारब कोई किसी से न अपना लगाए दिल।
किस दिल से मैं बयान करूँ, माजराए[1] दिल॥

लेकिन मस्ताना आशिक़ इस बात को नहीं सुनता और कहता है:—

जो तेरे नाज़[2] का बिस्मिल नहीं है।
हमारी राय में वह दिल नहीं है॥

\+ + +

न रोए जो वह है किस काम की आँख।
न तड़पे जो वह है किस काम का दिल॥

\+ + +

जिसे नफ़रत हो अच्छी सूरतों से।
नहीं है, वह नहीं है, दिल नहीं है॥

१— हाल। २— नखरा।

जो तेरे यार के क़ाबिल नहीं है ।
कलेजा वह नहीं है दिल नहीं है ॥

\+ + + +

वह सर नहीं जिसमें कि न हो सौदा किसी का ।
वह दिल नहीं जो दिल न हो दीवाना किसी का ॥

बावजूद इतनी हिम्मत के जब ज़रा आगे चलकर चोट लगती है तो अल्लाह-तोबा मचती है :—

तुफंगो तीर[1] तो ज़ाहिर न था कुछ पास क़ातिल के ।
इलाही उसने दिल पर ताक कर मारा तो क्या मारा ॥

इनको अभी मालूम ही नहीं है कि यह वह गली है जिसमें —

लाखों का सर काट लिया ।
ना मारा ना ख़ून किया ॥

भला इन्हें तो मालूम भी हो गया कि कोई चीज़ ताक कर मारी गई । इसके आगे का तजुरबा महफ़िल में चलकर हासिल हुआ :—

आज क्या हाल है यारब[2] सरे महफ़िल मेरा ।
कि निकाले लिए जाता है कोई दिल मेरा ॥

जब उजाले में सरे महफ़िल यह हाल है, तो अँधेरे का हाफ़िज ख़ुदा ही है, ज़रा और सुनिए —

अब्र कमाने यक निगाह जिस तरफ़ को की ।
तीरे नज़र की नोक जिगर से निकल गई ॥

हो गया न ग़ज़ब ! निगाह उठने भर की देर थी । फिर तो जिस तरफ घूम गई, उधर ही लाइन की लाइन साफ़ ! ब्रह्माजी

१—तमंचा । २— हे ईश्वर ।

को आदमी बनाने की क्या जरूरत है। उनसे कहिए,इसी हथियार का उपयोग विश्व-युद्ध में होने दें। लेकिन ऐसे हथियारों की मार बर्दाश्त करने के लिए ज़रा कड़ा कलेजा चाहिए और वह कलेजा सिवा आशिकों के पास होने के और कहीं हो भी नहीं सकता। तभी तो दिलेर आशिक़ कहता है :—

गर नहीं मिलती जगह तीरे निगाहे नाज़ को।
बाएँ पहलू में वो आ बैठे मेरे दिल की तरफ़॥

हिम्मत इसको कहते हैं। कहा भी है — "हिम्मते मर्दां मदद दे खुदा" लेकिन वही तीर जब चुभ जाता है तो कहना पड़ता है :—

तेरी तिर्छी नज़र का तीर है मुश्किल से निकलेगा।
दिल इसके साथ निकलेगा अगर यह दिल से निकलेगा॥

जब दर्द नाक़ाबिले बर्दाश्त हो जाता है तो पछताना भी पड़ता है :—

न था मालूम उल्फ़त में कि ग़म खाना भी होता है।
जिगर की बेकली और दिल का घबराना भी होता है॥
सिसकना आह भरना अश्क[1] का लाना भी होता है।
तड़पना लोटना बेताब होजाना भी होता है॥
कफ़े अफ़सोस[2] को मल मल के पछताना भी होता है।
किए पर अपने फिर खुद हाय दुख पाना भी होता है॥

१—आँसू। २—हाथ।

आख़िरश कमज़ोर आशिक़ चिल्ला उठता है :—

मालूम जो होता हमें अंजामे[1] मुहब्बत ।
लेते न कभी भूल के हम नामे मुहब्बत ॥

कभी-कभी अपनी तसकीन के लिए रोता हुआ दीवानए इश्क़ बड़-बड़ाता है :—

सावन के बादलों की तरह से भरे हुए ।
यह वह नयन हैं जिनसे कि जंगल हरे हुए ॥

जब वस्ल की कोई उम्मीद नहीं रह जाती तो दुनिया को मुहब्बत की निगाह से देखने वाला आशिक़ तमाम ख़िलक़त को दुश्मन समझ बैठता है :—

किसी के इश्क़ में हासिल यही हुआ मुझको ।
उदू[2] ज़मीन है, दुश्मन है आसमाँ मेरा ॥

इस हद तक पहुँच जाने पर अगर पाक परवरदिगार की निगाहे क़रम हुई तो माशूक़ा को रहम आता है और उसे आशिक़ के पास ख़ुद बख़ुद आकर कहना पड़ता है :—

उठो गले से लगा लो मिटे गिला[3] दिल का ।
ज़रा सी बात में होता है फ़ैसला दिल का ॥

उस वक्त आशिक़ को अपनी सारी हसरतें निकाल लेने का मौक़ा मिलता है । ऐसे मौक़े पर अगर माशूक़ा ज़रा भी क़दम पीछे हटाए तो आशिक़ ताव के साथ कह सकता है :—

१— नतीजा, फल । २—शत्रु । ३— शिकायत ।

तुमने देखा था इस अन्दाज़ से क्यों मेरी तरफ़।
अब सम्हलता है सम्हाले से कहीं दिल मेरा ॥

इसके जवाब में लामोहाला माशूक़ा को नीमरज़ा होकर शर्मिन्दगी के साथ कहना ही पड़ेगा :—

रज़ा[1] तेरी मेरी रज़ा बन गई है।
तेरा इश्क़, मेरी क़ज़ा[2] बन गई है ॥

इतना सुनते ही आशिक़ उछलकर माशूक़ा को गोद में उठा लेगा और उसके मुँह से निकल पड़ेगा :—

आज ख़ुशतक़दीर मुझसा कौन है ? कोई नहीं।
ख़्वाहिशें[3] पूरी हुईं दिलबर मेरे पहलू[4] में है ॥

ख़ुशतक़दीर का मज़मून सरे इजलास सब के सामने पढ़ा गया। मज़मून ख़त्म होते ही सरकारी वकील ने बहस की — यह तो आप सब कह गए कि आशिक़ ऐसा कहता है, वैसा कहता है, अल्लाह-तोबा मचती है, ऐसे मौक़े आते हैं, वैसे मौक़े आते हैं, यह कहना पड़ता है, वह कहना पड़ता है, लेकिन कभी ऐसा हुआ भी है ?

इस पर मुद्दई का वकील आगे बढ़कर बोला— दोस्तमन् ! ऐसा अगर कभी हुआ ही होता तो रोना किस बात का था ? जो कुछ हुआ है, होता आया है, और होते रहने की उम्मीद है, वह यह है; आलमपनाह के रूबरू पेश कर दीजिए; कहते हुए चन्द काग़ज़ात सरकारी वकील के हवाले कर दिये; जिसका शीर्षक था— "मन के लड्डू" नक़ल आगे देखिए।

१—स्वीकृति। २—मौत, मृत्यु। ३—इच्छाएँ। ४—बग़ल।

मन के लड्डू

मैं आँख बन्द करके तसव्वर[1] में पड़ा हूँ।
इतने में कोई छम्म से आजाए तो क्या हो॥

बेचारा माशूक़ा के इन्तज़ार में पड़ा हुआ तरह तरह के लड्डू खा रहा था; इतने ही में उसे उनकी आँखों का ख़्याल आगया :—

न जाने आँख में सुर्मे की कैसी धार धरते हैं।
हज़ारों गिरते पड़ते हैं हज़ारों जीते मरते हैं॥

उसी क्षण उसके गेसुओं का ख़्याल करके कहता है :—

कोई शब ऐसी न गुज़री कि बनाकर गेसू।
सैकड़ों बल मेरी तक़दीर में डाले न गए॥

× × × ×

सुबह दम बैठे थे वो जुल्फें बनाने के लिए।
आफ़ताब आया था आईना दिखाने के लिए॥

थोड़ी देर बाद उसके सामने माशूक़ा के चेहरे का नक़्शा आगया:—

उस रुख़े-रोशन[2] की जो कोई याद में मशग़ूल[3] है।
मेहर[4] उसके रूबरू[5] सूरजमुखी का फूल है॥

चमन में गुल ने कल जो दावए जमाल[6] किया।
सबा[7] ने मार थपेड़ा मुँह उसका लाल किया॥

१— कल्पना, ध्यान। २—उज्ज्वल कपोल। ३— संलग्न, लीन। ४—सूरज। ५—सामने। ६—शोभा, सौन्दर्य। ७—समीर, (पूर्वी-वायु) पुरवैया।

इसी तरह सोचते-सोचते उसे ज़रा बेचैनी सी महसूस होने लगी तो कहता है :—

बग़ैर यार के सब गुल हैं ख़ार[१] आँखों में।
खटक रही है चमन की बहार आँखों में॥

× × × ×

तसौवर से तेरे रुख़ के गई है नींद आँखों से।
मोक़ाबिल जिसके हो खुर्शीद[२] क्योंकर उसको नींद आए॥

× × × ×

मैं बेक़रार रहा वे न आए वायदे पर।
गुज़र गई है शबे इन्तज़ार आँखों में॥

यही बेचैनी जब ज़रा ज़ोर पकड़ने लगी तो कलेजा थामकर बोला—

शोलए[३] इश्क़[४] बुताँ दिल में छिपा रक्खा है।
हमने उस आग को सीने से लगा रक्खा है॥
मौजए फ़ुर्क़त से कभी आह न ली।
आग के साथ धुएँ को भी दबा रक्खा है॥

आख़िर, आग का धुआँ कब तक दबा रहता? ज़ोर मारकर निकल ही तो पड़ा :—

ख़ुदा के वास्ते सूरत दिखा दे ओ ज़ालिम।
लबों पै दम है, तेरा इन्तज़ार[५] बाक़ी है॥

आख़िर यह दबी हुई आग यहाँ तक पहुंची कि :—

तलाशे यार में जब हो गया बेचैन बेचारा।
उठाकर सर ज़मीं पर उसने अपना धम से दे मारा॥

१—काँटे। २—सूर्य। ३—चिनगारी। ४—प्रेम। ५—प्रतीक्षा।

ख़ून की धार क्या निकली उसकी क़िस्मत में लाली आ गई यानी जैसा कि उसका ख़्याल था, माशूक़ा पता नहीं कहाँ से यकायक छम्म से पधार पड़ी और उसका फूटा हुआ सर अपनी गोद में लेकर कहने लगी —जब तुम इतने बेचैन थे तो क़ासिद से ख़बर क्यों नहीं भिजवा दी ? इस पर वह खीझ कर बोला:—

दर्द-दिल दूर से हम तुमको सुनाएँ क्योंकर।
भेज दें डाक से आहों[1] की सदाएँ क्योंकर॥

इस वक्त हज़रत की हालत ज़रा ख़राब थी, इसलिए उनकी तसल्ली के लिए अपने देर से आने का कारण माशूक़ा ने हस्ब ज़ैल बयान किया :—

प्यारे पावों में दर्द रहता है, रंग चेहरे का ज़र्द[2] रहता है।
सब्रो ताक़त ने साथ छोड़ दिया, ग़मे फ़ुर्क़त ने दिलको तोड़ दिया॥

लेकिन आशिक़ ने अविश्वास के साथ कहा :—

न दिलजोई[3] की बातें हैं न समझाने की बातें हैं।
तुम्हारी जानमन सब दिल को तड़पाने की बातें हैं॥

और ग़ुस्से में आकर उन्हें श्राप भी दे दिया :—

मेरी तरह ख़ुदा करे तेरा किसी पै आए दिल।
तू भी जिगर को थामकर कहता फिरे कि हाय दिल॥

देने को तो श्राप उसने दे दिया लेकिन डर गया। डर के मारे उसे ऐसा मालूम होने लगा कि उसकी माशूक़ा उसे ज़ंजीर से बाँधना चाहती है, तब तो बेचारे ने डरी हुई आँखों से कहा :—

१—आवाज़ें। २—पीला। ३— दिल बहलाव।

दिल मेरा है हल्क़ए-गेसू[1] के अन्दर खुद फँसा।
मैं गिरफ्तारे बला हूँ काम क्या ज़ंजीर का॥

फिर बाँधना ही हो तो ज़ंजीर जैसी सख्त चीज़ से न बाँधो, क्योंकि-

परेशाँ दिल दिवाने को नहीं दर्कार[2] ज़ंजीरें।
तुम्हारे काकुले पुरख़म[3] का हर यक तार[4] काफ़ी है॥

फिर सहमी हुई निगाहों से माशूक़ा की निगाह देखकर कहने लगा-

क्या बात है कि सुर्ख़रू[5] आँखे हैं शोख़[6] की।
करने को क़त्ल मुझको हुआ ख़ूँ सवार है॥
यह हुआ ज़ाहिर निगाहे नाज़े क़ातिल से मुझे।
हाथ धो लेना पड़ेगा आज ही दिल से मुझे॥

फिर गिड़गिड़ाकर माशूक़ा से कहने लगा :--

फेर दें आप ये दुख दर्द का साथी मुझको।
मेरे पहलू में तड़पने के लिए दिल हो जाय॥

माशूक़ा को इस वक्त अपने आशिक़ की बेकस हालत पर रहम आ गया और वे हँसकर बोलीं :—

हम वह दिल रखते हैं जो रखता नहीं अपना जवाब।
आप क्या समझे कि हम बेदिल हैं हम बेदिल नहीं॥

ओहो! इतना सुनते ही तो जनाबे आशिक़ उछल पड़े और

१—घुँघराले बालों की कड़ी (साँकल)। २—ज़रूरत, आवश्यकता। ३—जुल्फ़, घुँघराले बाल। ४—बल खाया हुआ, पेंचदार। ५—लाल। ६—चंचल माशूक़।

गले में बाहें डालकर कहने लगे :—

कभी तू मार देती है कभी तू है जिला देती।
तमाशा है अजब तेरी इन आँखों की घुमाई का॥

किसी ने कहा है :—

मज़ा उस वक्त आता है जब आँखें चार होती हैं।

इस वक्त चारों आँखें एक ही रंग में रँगी हुई थीं। आशिक़ महोदय बड़े चाव से माशूक़ा की आँखें देखकर कहते हैं :—

तिर्छी नज़रों से न देखो आशिक़े दिलगीर को।
कैसे तीरन्दाज़ हो सीधा तो करलो तीर को॥

बेचारा बात करता जाता था लेकिन अन्दर की हालत थी—"न हाले दिल कहा जाता, न है बर्दाश्त ख़ामोशी" क्योंकि असल बात कहने से उनके बिगड़ जाने का डर था। फिर भी दिल कड़ा करके बोला :—

ज़रा यह देखना है दोनों कब आपस में मिलते हैं।
मेरी हसरत निकलती है तेरा ख़ंजर निकलता है॥

उन्हें ख़ामोश देखकर फिर बोला —

सभी से मिलते जुलते हो हमीं से परदा करते हो।
क़यामत इसको कहते हैं मोक़द्दर इसको कहते हैं॥

फिर भी वे ख़ामोश रहीं तो आप उनके सीने पर आँख गड़ा कर कहते हैं :—

सीना उभार पर है जोबन उठान पर है।
लाखों क़िसम के सदमे नन्हीं सी जान पर हैं॥
उभर के कहता है जोबन शबाब में तुमसे।
हुज़ूर रक्खेंगे कब तक दबा दबा के मुझे॥

सीना उभार पर है चमन में न जाइयो।
बादे सबा लगाएगी चोरी अनार की॥

इतना सुनकर उन्होंने ज़रा अपनी साड़ी वग़ैरह सम्हाली और महरम को भी कसा। इसपर आफ़त का मारा आशिक़ फिर बोल उठा :—

खींचा महरम को तो कुछ और भी निकला जोबन।
कहीं दबते हैं दबाने से उभरनेवाले॥

यह बात सुनकर उन्होंने हँसकर शर्म से गर्दन नीची कर ली; तो आशिक़ मन ही मन कह उठा :—

अदा से मुस्करा देना हया से सर झुका लेना।
हँसीनों को भी कितना सहल है बिजली गिरा देना॥

फिर माशूक़ा से कहने लगा :—

मुझे जो खींचते हैं उनको तुमने बाँध रक्खा है।
हमें भी देखना है तुम उन्हें कब तक छिपाती हो॥

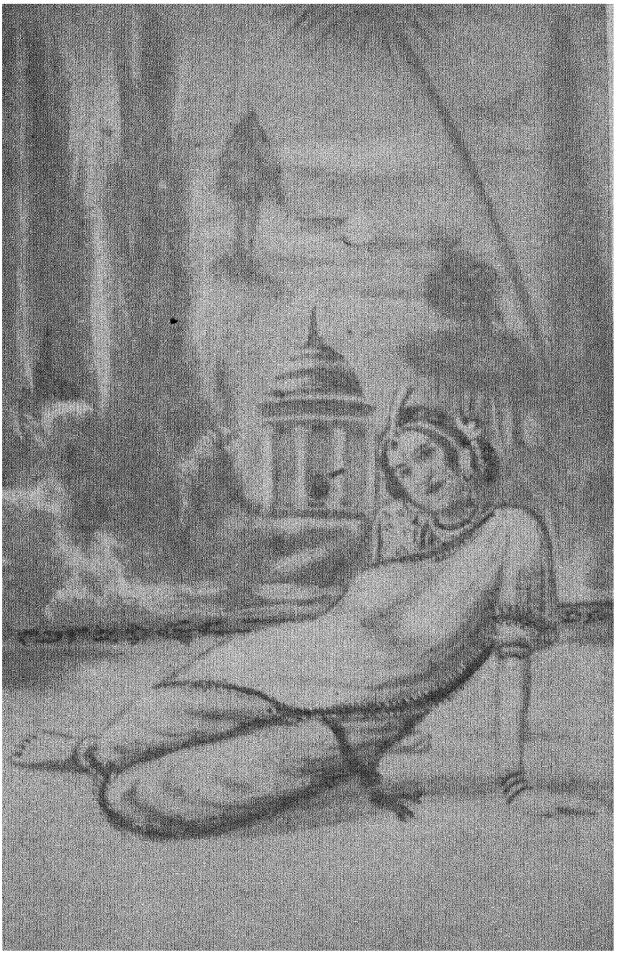
अब तो माशूक़ा की हया क्रोध में परिवर्तित हो गई और वे हज़रत का सर ज़मीन पर पटक कर चलने को तैयार हो गईं, तो आप लगे हाथ पैर जोड़कर खुशामद करने :—

जाती हो कहाँ इश्क़ का अंजाम सुनाकर आशिक़ को रुलाकर।
बैठे हैं तेरे दर पर हम होश भुलाकर कुछ भी तो रहम कर॥

जब देखा कि उनके ऊपर खुशामद का कोई असर नहीं हो रहा है तो आप कहने लगे—अगर तुम चली जाओगी तो :—

बनेंगे आह की तासीर से सारे चमन काले।
हरयक बुलबुल भी काली होंगी होंगे गुल बदन काले॥

मुस्कान



मुझे जो खींचते हैं उनको तुमने बाँध रक्खा है।
हमें भी देखना है तुम उन्हें कब तक छिपाती हो॥ (पृष्ठ ७२)

वल्लाह कमाल है— धनि बिरही धनि वह हिया जहँ अस अगिन समाय।

ये अपना रोते-धोते पड़े रह गए; माशूक़ा ने नाज़ो अंदाज़ के साथ अपना रास्ता नापा। उनके चले जाने के बाद जनाब बड़ी देर तक बड़ बड़ाते रहे :—

जब उनको कुछ रहम आया हया ने समझाया।
बिगड़ बिगड़ गई तक़दीर मेरी बन बन के॥
तदबीर का कुछ बस नहीं तक़दीर के आगे।
तक़दीर की तहरीर मिटाई नहीं जाती॥
दिल लेही चुके नाज़ से शोख़ी से अदा से।
अब उनकी बला आँख मिलाती है किसी से॥

× × × ×

सारे झगड़े ज़िन्दगानी के लिए।
ज़िन्दगानी का ठिकाना कुछ नहीं॥

× × × ×

आग लग जाय आँख लगने को।
न लगी आँख जबसे आँख लगी॥

× × × ×

दिल चुराया है तो अब आँख मिलाएं क्योंकर।
सामने होती है मुश्किल से गुनहगार की आँख॥

इसी प्रकार यादगारे यार में उनकी हालत अबतर होती गई। आख़िरकार उन्होंने इन शब्दों के साथ अपना दम तोड़ दिया—

मैं जाता हूँ जहाँ से तू आता नहीं याँ तक।
ज़ालिम तुझे कुछ ख़ौफ़ ख़ुदा का नहीं आता॥

अपनी माशूक़ा के प्रति मरने के बाद इतना कहते गए :—

गए हैं रंजो ग़म ऐ दाग़ बादे मर्ग़[1] साथ अपने।
मगर तुम तो बला निकले ग़ज़ब निकले सितम निकले ॥

× × × ×

निकलने को तुम्हारी बज़्म से तो सब निकलते हैं।
कोई हँसकर निकलता है कोई रोकर निकलता है ॥
मेरा दिल यूँ तुम्हारे बज़्म से बाहर निकलता है।
कि जैसे मैक़दे से टूटकर साग़र निकलता है ॥

ये बेचारे मरने के बाद पड़े-पड़े योंहीं बिलाप कर-करके रो रहे थे, कुछ लोग इनके जनाज़े की तैयारी में लगे हुए थे, कुछ लोग इनके आसपास बैठे हुए रोने में इनका साथ दे रहे थे और माशूक़ा को बुरा-भला कह रहे थे। मरने के बाद भी दूसरों के मुँह से अपनी माशूक़ा की बुराई आप न सुन सके तो कहते हैं :—

बुरा हो इस मुहब्बत का बिगाड़े इसने घर दोनों।
मुझे बर्बाद कर डाला उसे बदनाम कर डाला ॥

मैं इनकी बात सुनकर हँस पड़ा, लेकिन और लोग ख़ूब खुलकर रोए। मैं अपने न रोने का कारण यहाँ आलमपनाह को बतला देना बहुत ज़रूरी समझता हूँ, क्योंकि मेरे न रोने का मतलब अगर नाज़िरीन इजलास सिर्फ़ यही लगा बैठे कि मैं बड़ा सख़्त-दिल हूँ तो बेशक मेरी आबरू में बट्टा लग जाने का अन्देशा है; इसलिए आप लोग अच्छी तरह समझने की तकलीफ़ फ़र्माएँ:—

एक दोस्त[2] ने मुझे एक मर्तबा बड़े मार्के की बात बतलाई थी:—

१—मृत्यु। २—ध्यान देने योग्य बात; विशेष बात।

वही कूए जानाँ में होता है दाख़िल ।
हुआ चाक दिल या कटा जिसका सर है ॥

अब आप ही बतलाने की तकलीफ़ गवारा करें कि फटे दिल और कटे सिर का आदमी कितने घंटे ज़िन्दा रह सकता है। अस्तु मैं तो पहले ही इन्हें मरा हुआ समझ चुका था। जिस वक्त लोग इन्हें दफ़नाने के लिए ले जा रहे थे, मैं भी तफ़रीहन साथ चला गया। लौटते वक्त सुना तो आप क़ब्र के अन्दर से कह रहे थे :—

धुआँ पैदा हुआ यह दिलजलों की सख़्त आहों का।
जिधर देखो उधर ही हो गये हैं बन के बन काले ॥

फिर अभी तो मरने के बाद भी उनकी उम्मीद ज़िन्दा थी :—

रहा गर बादे मुर्दन भी असर सोज़े मुहब्बत का।
लहद[1] से हम उठेंगे देखना पहने कफ़न काले ॥

१—क़ब्र।

बर्बादिए मय-ख़ाना

तरग, तुरँग, नारी, नृपति, नीच जाति, हथियार।
रहिमन इन्हैं सम्हारिए, पलटत लगै न बार॥

जो ख़ुदावन्द ताला पहली पेशी पर लेखक महोदय को फाड़े खाते थे, वे आज शुअराए हिन्द पर उलट पड़े। हुक्म हुआ—इसी वक्त हिन्दोस्तान के तमाम मयख़ानों को बर्बाद कर दो। बाशिंदगाने हिंद में से कोई शख़्स आज से शराब बनाता, बेचता या पीता हुआ नज़र न आए, वरना मुल्के अदम का हक़दार होगा और जिस बुत ने मन के लड्डू खानेवाले को मौत के घाट उतारा है, उसे बज़रिए सम्मन अगली पेशी पर तलब करो।

शराब को क़तई हिन्दबदर कर देने का बेढंगा हुक्म किसी को पसन्द न आया। वक़्लाने मुद्दई व मुद्दालेह तथा ओहदेदारान आलम पनाह सबने मिलकर बेतरह कोशिश की, हरचन्द समझाया कि शराब का एक दम बहिष्कार ठीक न होगा, लेकिन :—

अरज गरज मानैं नहीं, रहिमन ये जन चारि।
रिनिया राजा माँगता, काम आतुरी नारि॥

आलम पनाह ने किसी की एक न सुनी और अपना हुक्म बहाल रक्खा। ख़ुदावन्द के कारिंदों ने हिन्दोस्तान भर के शहरों, क़स्बों और गावों में जा-जा कर शराब की सभी दूकानें बंद करा दीं। पासियों और चमारों के घरों में घुस-घुसकर उनकी शराब की भट्ठियाँ तोड़-फोड़ डालीं तथा शराब के मटके और भभके बहिस्त में उठा ले गए।

लेकिन पक्के पियक्कड़ कब मानने लगे? उन्होंने सुदूर सागर पार वाली महुए से भी बढ़िया अंगूरी शराब मँगाना शुरू कर दिया; उसका नाम रख दिया 'व्हिस्की'[1] और बेखौफ़ोखतर मज़े से पीने लगे। अब खुदावन्द क्या कर लेंगे? न क़ानून का डर रहा, न उसको पीने से शराबख़ोरों में ही गिनती होती है:—

पेट भर पीते रहे मय-ख्वार कहलाए नहीं।
हिंद में हम रिंद हैं, जन्नत में होंगे पारसा॥

कभी भूले-भटके किसी ने टोंक भी दिया तो सीधा जवाब है —

आई ऐम यूज़िंग इट ऐज़ ए मेडिसिन *

१—व्हिस्की (अंगरेज़ी शराब)।

* मैं इसे दवा के रूप में ले रहा हूँ।

तीसरी पेशी

तीसरी पेशी के दिन आलमपनाह कुछ संजीदह नज़र आते थे। वजह किसी को मालूम न थी। कुछ ज़रूरी काम-काज होने के बाद शुअराए हिन्द का मामला पेश हुआ।

मालूम हुआ मुद्दई ग़ैर हाज़िर है। मुद्दालेह के वकील ने आगे बढ़कर कहा— आलमपनाह! आलमे ऐक्ट नं० सात खरब छः अरब पाँच लाख चार हज़ार तीन सौ दो के मुताबिक़ मुद्दई की अदम मौजूदगी में दावा ख़ारिज हो जाना चाहिए। सरकारी वकील ने ख़िलाफ़त की— क़ुदरती ऐक्ट नं० सौ खरब एक के मुताबिक़ ता वक्ते अदालत मुद्दई का इन्तज़ार करना होगा।

इतने में बाहर बड़ा शोर गुल सुनाई पड़ने लगा। दर्बान ने दस्तबस्त: हाज़िर होकर अर्ज़ किया— परवरदिगार हिन्दुस्तानी हुजूम * कुछ अर्ज़ करना चाहता है।

त्रिलोकीनाथ ने वज़ीरे आज़म को कुछ सलाह दी। इस सलाह के मुताबिक़ वज़ीरे आज़म ने हुक्म दिया। एकनुमायन्द: इन्तख़ाब करके भेजा जा सकता है।

दर्बान आदाब बजाकर रवाना हुआ। वज़ीरे आज़म ने शुअराए हिंद के वकील से सवाल किया —क्या तुम और कोई सफ़ाई पेश करना चाहते हो?

---

* हम अपने पाठकों को बतला देना चाहते हैं कि यह हिन्दुस्तानी हुजूम, हिन्दुस्तानी मय-कशों का गिरोह था जोकि शराब की दूकानें बंद हो जाने की वजह से निहायत परेशान होकर दर्बारे आलमपनाह में अपनी परेशानी बयान करने आया था।

वकील ने कुछ काग़ज़ात सामने रखते हुए कहा — एक आशिक़ की चश्मदीद कामयाबी पेशे नज़र है। अगर हुज़ूरेआज़म को शक हो, तो आशिक़ मेरे हमराह है। गवाही तलब कर सकते हैं।

वज़ीरे आज़म को सरकारी वकील ने मुख़ातिब किया :— मुद्दई की अदम मौजूदगी में किसी भी बयान पर बहस मुमकिन नहीं है। मुद्दालेह के वकील ने कहा—दोस्तमन् बहस नामुमकिन होते हुए भी बयान लेना कोई जुर्म नहीं है।

वज़ीरेआज़म ने बयान क़बूल कर लिया। इतने में क्लर्क ने वज़ीरेआज़म के हाथ में एक तार देते हुए कहा—अभी-अभी प्यून[1] दे गया है। तार में लिखा था —

* एयरो प्लेन मिस्ड मे नॉट रीच इन टाइम।

—हिन्दी राइटर

वज़ीरे आज़म ने तार पढ़कर रखते हुए कहा— दिलावर देवी कौन है, हाज़िर करो। पुकार हुई। एक अपटूडेट[2] लेडी[3] बहुज़ूर आलम पनाह पेश हुई। सरकारी वकील ने खड़े होकर फ़र्माया— देखो यह अदालते ख़ुदा है। यहाँ झूठ बोलने वाला सख़्त सज़ा पाता है; इसलिए जो कुछ वाक़या हो; सच-सच बयान करना। इसके बाद वज़ीरेआज़म ने सवाल किया—क्या तुम्हारा नाम दिलावरदेवी है ?

१—चपरासी। २—फ़ैशनेबुल। ३—महिला।

* हवाई जहाज़ छूट गया समय पर नहीं पहुँच सकते।

लेडी—यस सर ! आई ऐम दि वेल नोन लेडी दिलावर। †

वज़ीरेआज़म—क्या तुम हिन्दुस्तानी नहीं बोल सकतीं ?

दिलावरदेवी—हिज़ मेजेस्टी विल इक्सक्यूज़ मी, नॉट दैट आई कान्ट स्पीक, बट आई डोन्ट लाइक इट। ‡

वज़ीरेआज़म—लेकिन अगर फिर भी किसी क़दर तकलीफ़ कर सको तो अच्छा है, ताकि तुम्हारे बयान सब लोग अच्छी तरह समझ सकें।

दिलावरदेवी—आँल राइट आई विल ट्राई। §

वज़ीरेआज़म—क्या तुम किसी ऐसे शख़्स को जानती हो, जो तुमसे मुहब्बत करता रहा है।

दिलावर —क्यों नहीं !

वज़ीरे आज़म— उसका नाम ?

दिलावर— कोई एक तो है नहीं !

वज़ीरे आज़म— क्या कहा ?

दिलावर— मेरा मतलब सिर्फ़ यही है कि मुझे कुछ वक्त दिया जाय ताकि मैं बैठकर अपने आशिक़ों के नाम की एक लिस्ट बना डालूँ।

वज़ीरे आज़म— अच्छा तुम्हें पाँच मिनट का वक्त दिया जाता है।

---

† जी हुज़ूर ! मैं ही वह मशहूर लेडी दिलावर हूँ।

‡ हुज़ूरे आज़म ! मुझे माफ़ करेंगे। यह नहीं कि मैं उसे बोल नहीं सकती; पर मुझे वह पसन्द नहीं।

§ बहुत अच्छा; मैं कोशिश करूँगी।

लेडी दिलावर



यस सर, आइ एम द वेल-नान लेडी दिलावर। (पृष्ठ ८०)

दिलावर— माफ़ कीजियेगा इतने वक्त में तो मेरे एक चौथाई आशिक़ों के भी नाम नहीं लिखे जा सकते।

वज़ीरे आज़म— लेकिन हम इससे ज़्यादह वक्त देने में मजबूर हैं। तुम सिर्फ़ अपने ख़ास-ख़ास आशिक़ों के ही नाम बताओ।

दिलावर—अच्छी बात है, हुज़ूरे आज़म नोट करें— नं. १ ख़ुदा वन्द ताला। नं. २ वज़ीरे आज़म-ख़ुदा। नं. ३ मेरी अम्मा। नं. ४ मेरे वालिद।

वज़ीरे आज़म—ख़ामोश; गुस्ताख़ लड़की क्या बकती है?

दिलावर— अगर आपको एतराज़ है तो अपना नाम काट दीजिए।

वज़ीरे आज़म— और आलम पनाह का?

दिलावर—उनकी मोहब्बत पर तो हम लोगों का पैदायशी हक़ है।

अब वज़ीरे आज़म के दिमाग़ में आया कि लड़की क्या कह रही है! उन्हें दिलावर की दिलावरी ने शर्मिन्दा कर दिया।

दर्बान ने आकर दस्तबस्त: अर्ज़ किया — हिन्दी-लेखक अपने वक़ील के साथ दर्बारे आली में हाज़िर होना चाहता है।

हुक्म मिला— आने दो।

मुद्दई के वक़ील ने पहुँचते ही गुज़स्ता बयानात की तहरीरात पर निगाह दौड़ाई। दिलावर का बयान पढ़ते ही हज़रत को पसीना आ गया। यह समझने में उन्हें देर न लगी कि इस

लड़की ने किस होशियारी से ख़ुदावन्द को अपने फ़ेवर[1] में कर लिया है। चुनांचे उन्होंने मामले को घुमाते हुए मुद्दालेह के वकील से सवाल किया— क्या मैं अपने दोस्त से पूछ सकता हूँ कि कामयाबिए आशिक़ का चश्मदीद गवाह कहाँ है ?

मुद्दालेह के वकील ने फ़र्माया— उससे कुछ पूछने के पहले हुक्मे आलमपनाह ज़रूरी है।

मुद्दई के वकील ने ग़लती को महसूस करते हुए वज़ीरे आज़म को मुख़ातिब किया— क्या हुज़ूरआली मुद्दालेह की सफ़ाई बनाम कामयाबिए आशिक़ रूबरू हाज़रीन[2] पढ़ने का मौक़ा देंगे।

जवाब मिला— बख़ुशी।

सरकारी वक़ील ने कहा— मेरे ख़्याल से दिलावर देवी का पूरा बयान क़लमबन्द हो जाने के बाद कामयाबिए आशिक़ पर बहस होना ज़्यादह मुनासिब होगा।

वज़ीरे आज़म दिलावर से खट्टे पड़ चुके थे, इसलिए ख़ामोशी अख़्त्यार कर गए।

मुद्दई का वकील मामले को ताड़ गया, वह भी दिलावर को आगे बयान देने का मौक़ा न देकर बहस में उखाड़ना चाहता था इसलिए बोला — कोई बात नहीं है, उसी सिलसिले में दोनों काम हो जायँगे।

सरकारी वकील वज़ीरे आज़म का रुख़ देखकर ख़ामोश हो गया। कामयाबिए आशिक़ पढ़ा गया जोकि हस्ब ज़ैल था।

१—तरफ़दारी। २—अनुभव।

कामयाबिए आशिक़

इस तरफ़ भी हो निगाहे लुत्फ़[१] ऐ आलमनवाज़[२]।
इक जहाने आरज़ू[३] आबाद मेरे दिल में है॥

ख़ुशामद से अच्छे-अच्छे संगदिल[४] भी मोम हो जाते हैं, फिर एक सीमतन गुलबदन माशूक़ा का दिल जोकि मोम का ही बना रहता है, पिघलते कितनी देर लगती है? बस शीरीं सख़ुन के साथ-साथ तज़ल्ले तक़रीर की आँच अन्दर तक पहुँच भर जानी चाहिए। हमारे दोस्त को इसका हत-कण्डा अच्छी तरह मालूम था। बस एक ही पुकार में माशूक़ा फ़िदाए जाँ होकर चट उसके पास आ गई और सरे महफ़िल पूछ बैठी—

ज़रा आज देखेंगे हम खोलकर दिल।
तेरे दिल में क्या आरज़ू है कहाँ है॥

आशिक़ था ज़रा होशियार। उसने फ़ौरन जवाब दिया—

ग़ैर के आगे न पूछो इसमें है इक ख़ास राज़।
फिर बता देंगे तुम्हें जो कुछ हमारे दिल में है॥

माशूक़ा इससे कम न थी, उसने इसे नीचा दिखाना चाहा :—

न आहें सर्द[५] हैं तेरी, न ढीली नब्ज़[६] चलती है।
न शोला है न नाला है, यही पुरआरज़ू[७] दिल है?

१-दृष्टि का आनन्द। २-दुनिया पर रहम करने वाले। ३-तमन्ना कामना, अभिलाषा। ४—पत्थर के समान दिल वाला। ५- ठंडी ६—नाड़ी। ७—अभिलाषा-पूर्ण।

आशिक़ ने फिर सम्हाला :—

आह करता मैं तो होता और भी रुसवाए ख़ल्क़[1]।
यह ग़नीमत है कि दिल का राज़ मेरे दिल में है[2]॥

माशूक़ा ने ताड़ लिया कि इसको बातों में हराना टेढ़ी-खीर है। अब सताना चाहिए। चुनांचे वह अपने महफ़िल में चली गई। हज़रते आशिक़ एक लम्बे अर्से तक उसका इन्तज़ार करते रहे। आख़िरश तंग आकर कह उठे :—

जाकर जो कोई ग़ैर की महफ़िल में रह गया।
सब हौसला वह दिल का मेरे दिल में रह गया॥

इत्तफ़ाक़न मैं उसी तरफ़ से होकर कहीं जा रहा था। अपने दोस्त को बेज़ार देखकर उसके क़रीब गया और हक़ीक़त मालूम की। तब इन्हें समझाया कि जाकर अपना काम करो। इन लोगों के चक्कर में मत पड़ो। बमुश्किलतमाम हज़रत उठे और कहते हुए घर गए :—

काम क्या करना है कोई काम अब करना नहीं।
क्या मेरे दिल में है अब मरने की हसरत दिल में है॥

इसके बाद घर जाकर इसकी क्या हालत रही सो तो मुझे मालूम नहीं है; लेकिन-डेढ़ दो बरस बाद एक दिन मुलाक़ात हुई तो मैंने पूछा, कहिये क्या हाल-चाल हैं? इस पर आप रो पड़े :—

दिल खोए हुए बरसों गुज़रे हैं मगर अब भी।
आँसू निकल आते हैं जब याद दिल आता है॥

× × × ×

जी चाहता है फिर वही फ़ुर्सत कि रात दिन।
बैठा रहूँ तसव्वरे जानाँ किए हुए॥

१—बदनाम। २—संसार।

इसके गरम-गरम आँसू देखकर मुझे डेढ़-दो बरस की पुरानी बात याद आगई। अब मैं समझ सका कि दिल की आग इसे कहते हैं, जो कि दो बरस हो गए एक रफ़्तार से सुलग रही है, बुझने को नहीं आती। मुझे इसकी इस बेज़ार हालत पर रहम आ गया। मैंने पूछा तुमने अपनी माशूक़ा से जाकर अपने दिल का हाल-चाल कहा भी? इस पर वह आहें भर कर कहने लगा :—

दिलसे वो बातें किसी के दिल की जब सुनते नहीं।
उनसे हाले दिल कहें भी तो कहें किस दिल से हम॥

दाद[1] तक तो पहुँचना मालूम है।
याँ कोई फ़रियाद[2] ही सुनता नहीं॥

× × ×

नहीं कोई सुनता यहाँ 'दौर' वरना।
बहुत कुछ सुनाने को जी चाहता है॥

फिर मुझे समझाकर कहने लगा :—

जो खुल जाएगा राज़े इश्क़े उल्फ़त अहले महफ़िल[3] पर।
तो हसरत सबको आएगी मेरे हसरतभरे दिल पर॥

मैंने तसल्ली देते हुए कहा— तुम घबराओ नहीं, मैं किसी से न कहूँगा; तो फिर बोला :--

राज़े उल्फ़त का छिपाना किस क़दर मुश्किल हुआ।
जब किसी को हमने चाहा, जब किसी पर दिल हुआ॥

१—प्रशंसा। २—अनुनय-विनय। ३—सभासद।

मैंने इसकी माशूक़ा का घर देख ही लिया था। मेरी तबीयत न मानी, जाकर उन्हें उल्टा-सीधा समझाकर लिवा लाया। माशूक़ा ने आते ही इठलाकर पूछा :—

कहो क्या रंग है दिलका, कहाँ पर दर्द होता है ?
ख़ुदा का शुक्र ज़िन्दा हो, मुझे तो डर क़ज़ा का था॥

आशिक़ ने जवाब दिया :—

हम तौरे[1] इश्क़ से तो वाक़िफ़ नहीं हैं लेकिन।
सीने में जैसे कोई दिल को मला करे है॥

× × × ×

शायद इसी का नाम मुहब्बत है 'शेफ़्ता'।
इक आग सी है सीने के अन्दर लगी हुई॥

× × × ×

ख़ून रो देता है अक्सर ख़ूने हसरत[2] देखकर।
पूछते क्या हो तुम अपने ग़मज़दे[3] के दिलका रंग॥

दो मिनट चुप रहकर फिर बोला :—

कुछ तलातुम[4] सा तो बरपा सीनए बिस्मिल[5] में है।
अब न जाने तू है ख़ुद या दर्द तेरा दिल में है॥

माशूक़ा को चुप देखकर फिर एक शिगूफ़ा छोड़ा :—

सौ बहारें उसपै सदक़े लाख गुल उसपर निसार।
वह लहू का एक क़तरा जो हमारे दिल में है॥

१— तरीक़ा, रीति, ढंग। २— लालसा का ख़ून। ३—घोर दुःखी, कष्ट-भोगी। ४—तूफ़ान। ५—उपस्थित।

अब ज़रा माशूक़ा ने इसके कलेजे पर हाथ रखकर इसे तसल्ली दी और कहा— घबराओ नहीं, सब्र से काम लो। आज मुझे ज़रा जल्दी है। फिर कभी तुमसे मिलूँगी। अब इसका सब्र फिर कूच करने लगा और माशूक़ा से बोला :—

तुमने करने को ज़बाँ से कर लिया इक़रारे वस्ल।
वह भी है दिल में हमारे जो तुम्हारे दिल में है॥

जब वे जाने लगीं तो कहने लगा :—

तेरे वायदे पर जिए हम झूठ जान जाना।
कि ख़ुशी से मर न जाते गर एतबार होता॥

आलमपनाह ग़ौर फ़र्माएँ आशिक़ों की जान दोनों हालत में ख़तरे से ख़ाली नहीं रहती। हिज्र में वह पागल हो जाता है और वस्ल में मारे ख़ुशी के मर जाने का डर रहता है। आख़िरश माशूक़ा ने इसकी बात पर कोई ख़्याल न किया और चली गई। कुछ दिन बाद पता नहीं इसे कैसे मालूम हो गया कि इसकी माशूक़ा का दिल कहीं दूसरी जगह अटका हुआ है, तो माशूक़ा के घर जाकर समझाने लगा :—

न लो दिल लेके मेरा ग़ैर का दिल।
कि जैसे एक वैसे दूसरा दिल॥

लेकिन माशूक़ा पर इसका कोई असर न होता देखकर यह अपने रक़ीब का पता लगाता हुआ उसके घर पहुँचा और उसे भड़काने की कोशिश की :—

न देंगे लेके वे ऐ हज़रते "नूह"।
किसी का दिल फिर उस पर आपका दिल॥

लेकिन सब बेसूद साबित हुआ। हुआ वही जो इश्क़ की

गली में होना लाज़िम था। बेचारा मिस्ले मजनूँ गलियों की ख़ाक छानता और यह कहता हुआ दर-दर भटकने लगा —

जब से सुना है मरने का नाम ज़िन्दगी है।
सर से कफ़न लपेटे क़ातिल को ढूँढ़ते हैं॥

लड़के इसके पीछे पत्थर लेकर दौड़ने लगे और यह लड़कों के ऊपर धूल उड़ाने लगा। एक दिन पुलिस ने पकड़कर इसे पागल ख़ाने में दाख़िल कर दिया। ख़ुदा की क़ुदरत! इत्तफ़ाक़ से कुछ रोज़ बाद इसकी माशूक़ा की सवारी पागलख़ाने के फाटक के सामने से होकर गुज़री। पता नहीं, माशूक़ा ने उसे देखा या नहीं लेकिन उसने उन्हें देख लिया और लगा सीकचों के अन्दर से बड़बड़ाने :—

झुठालता है मुझे क्यों रिहा न कर सैयाद[1]।
इन्हीं दिनों में हमेशा बहार आती है॥

× × × ×

क़फ़स में देखकर मुझको तबीयत उनकी भर आई।
नहीं मालूम क्या गुज़री मेरे सैयाद के दिल पर॥

× × × ×

क़फ़स में बैठके करता हूँ जब नवासंजी[2]।
तो झुक के देखती है शाख़ आशियाने की॥

× × × ×

क़फ़स की तीलियों में जाने क्या तरकीब रक्खी है।
कि हर बिजली क़रीबे आशियाँ मालूम होती है॥

१— क़ैद करने वाला। २— चीख़-पुकार, विलाप।

अब रिहाई की तमन्ना दिले नाशाद नहीं।
[1]
रास्ता अपने नशेमन का मुझे याद नहीं॥

यह इस तरह बड़बड़ा ही रहा था कि आफ़त का मारा मैं उसी तरफ़ से निकल पड़ा; वह मुझे देखते ही चिल्ला उठा :—

मैं क़ुर्बान हो जाऊँ हज़ारों जान से तुम पर।
मेरा महबूब जो लाके बिठा दे मेरे पहलू में॥

बवजह होने एक दोस्त के मैंने इस बेकस की मदद करना फ़र्ज़ समझा और इससे पूछा कि जाकर क्या कह दूँ, तो उसने फ़र्माया, जाकर कह देना :—

[2]
लाग़िर हूँ मैं इतना कि निगल जाय जो चिउँटी।
अँटके न गले में ये तने ज़ार भी मेरा॥

मुझे इसकी बातपर बड़े ज़ोर की हँसी आगई। कहीं मेरी हँसी पर आशिक़ को ग़ुस्सा न आ जाय, इस डर से आगे कुछ न पूछ कर मैं फ़ौरन मंज़िले मक़सूद पर चल पड़ा। माशूक़ा के घर पहुँचकर मैंने हूबहू उसके जुमले को दोहरा दिया :—

लाग़िर है वो इतना कि निगल जाय जो चिउँटी।
अँटके न गले में वो तने ज़ार भी उसका॥

लेकिन इस बार कुछ ज्यादे कहने-सुनने की ज़रूरत नहीं पड़ी; माशूक़ा ख़ुद श्रृङ्गार करके इसके पास आने के लिए दर्वाज़े पर खड़ी थी। मेरा ख़्याल है कि उसने भी इसे क़फ़स में देख लिया था और उसे कसकर रहम का झोंका आगया था। हम दोनों बात की बात में पागलख़ाने पहुंच गए। पहुंचते ही माशूक़ा ने रंग जमाया—

१— घोंसला, नीड़। २ दुर्बल।

तुम तो कहते थे, मेरे पहलू में कुछ कुछ दिल भी है।
दिल जो होता तो मेरे दिल की खबर लेते न तुम ॥

आशिकों की यही तो खूबी है कि वो लाख बदहवास हों लेकिन माशूका को सामने पाकर फौरन बाहवास हो जाते हैं। उसने छूटते ही जवाब दिया :—

अगर हो इम्तेहाँ बाकी तुफंगो तीर ले आओ।
चलाओ मेरी गर्दन पर, कड़ाई दिल की तब देखो ॥

माशूका अपने आशिक की इस हाजिरजवाबी पर हजार जान से कुर्बान हो गई और हाथ पकड़कर घर चलने का इसरार करने लगी। अब कुछ न पूछिए! कभी की तेरी, कभी की मेरी; आशिक मचल गया :—

जाऊँगा कहाँ पर मैं, मेरा न कहीं घर है।
दुनियाँ में किसी आशिक का अब नहीं गुजर है ॥

माशूका ने बेढब अन्दाज के साथ गले में हाथ डालकर कहा :—

आंखों में समा जाना, पलकों में रहा करना।
दरिया भी इन्हीं में है, मौजों[1] में बहा करना ॥

बस इतना काफी था। ये तो मने-मनाए बैठे ही थे। सिर्फ जरा मनाए जाने का बहाना चाहते थे। माशूका आगे-आगे और आप उनके पीछे-पीछे चल दिए और कहते गए :—

इस कदर मत्थे को रगड़ा आस्ताने यार[2] पर।
मिट गया लिक्खा हुआ बिगड़ी हुई तकदीर का ॥

१—लहरों। २—देहरी।

माशूक़ा के दरवाज़े पर पहुँचकर फिर बोले :—

हमको दोज़ख़ का न डर और न जन्नत की तलाश।
यार के द्वार को वैकुण्ठ कहा करते हैं ॥

हज़रते आशिक़ तो अपनी माशूक़ा के साथ अन्दर चले गए और मैं यह सोच कर बाहर खड़ा रहा कि ये निकले तो रुख़सत माँगकर अपने घर जाऊँ। आख़िर बड़ी देर बाद निकलकर कहते हैं :—

उनका बोसा आज मैंने बेतकल्लुफ़ ले लिया।
गालियाँ खाईं बला से मुंह तो मीठा हो गया ॥

एक तो इनकी माशूक़ा के इसरार से, दूसरे बवजह अँधेरी शब मुझे वहीं रुक जाना पड़ा। मैंने रात को सुना —

तुम्हारी आँख कहती है, बहुत रोए हो ग़फ़लत[1] में।
बताना सच, क़फ़स में भी हमारी याद आती थी ॥

जवाब था :—

गवाही मेरी आँखें हैं, क़सम अपनी तुम्हारी है।
सिसकते शब गुज़रती थी, तुम्हारी याद आती थी ॥

सवेरे मुलाक़ात हुई तो हमारे दोस्त ने बयान किया :—

पाला पड़ा है मुझ को अजब बदमिज़ाज[2] से।
झगड़े तमाम दिन हैं लड़ाई तमाम रात ॥
कोई घड़ी न वस्ल की आई तमाम रात।
बातों में उस परी ने गँवाई तमाम रात ॥

१—असावधानी, विसुधि। २—बुरे स्वभाव वाले।

पैरों पड़े बलाएँ लीं और मिन्नतें भी कीं।
सरकी न उनके सर से दुलाई तमाम रात ॥
शक उनको था कि रात में बोसा न लें कहीं।
गालों पे धरके सोए कलाई तमाम रात ॥

मैंने सलाह दी :—

धमका के बोसा लीजे रुख[1] रश्क[2] माह[3] का।
चन्दा वसूल होता है, साहब दबाव से ॥

और अगर धमकी से काम न चले तो कहना :—

चुपके से कान में सुनो परदे की बात है।

कान मुँह के पास आते ही चट बोसा ले कर कह देना:—

ये परदा वरदा कुछ नहीं सब वाहियात है ॥

इतना कहकर मैंने रुखसत चाही। उन्होंने मुझे रुखसत देते हुए कहा—आप जाइए; मैं तो अभी यहाँ रहूँगा क्योंकि :—

बाद मुद्दत के बड़ी मुश्किल से मिले हैं मुझको।
अब तो मैं मिट के निकालूँगा हौसले दिल के ॥

कामयाबिए आशिक़ की पूरी तहरीर सुनते ही मुद्दई के वकील ने, मुद्दालेह के वकील से कहा—आप जिस तहरीर को कामयाबिए आशिक़ कह रहे हैं, मैं उसे जिल्लते आशिक़ कहना ज्यादह पसंद करूँगा। मैं अपने दोस्त के चेहरे से महसूस कर रहा हूँ कि वह इसका सबब जानना चाहते हैं। इसकी वजह साफ़ है—पहिली बात तो यह है कि सारी तहरीर से साफ़

१—चेहरा। २—ईर्षा। ३—चन्द्रमा।

साबित है कि अर्सए तीन साल में, बावजूद मुतवातिर ग़म उठाते रहने के भी आशिक़ को सिवाय ज़िल्लत के अब तक कुछ हासिल नहीं हुआ। माना कि बमदद एक जिगरी दोस्त के आशिक़ माशूक़ा के घर तक पहुँच भी गया; तो यह बात क्योंकर मान ली जाय कि उसे विसाल हासिल हो गया। मुमकिन है माशूक़ा ने उसे फिर किसी बहाने से ठोकर मारकर अलग कर दिया हो। फिर आलमपनाह को मुख़ातिब करके कहने लगा—आलमपनाह! ग़ौरफ़र्मा हों, किस क़दर क़हरनाज़ला सुलूक़ है! इससे भी सख्तदिल माशूक़ा का चश्मदीद क़िस्सा मैं बहुज़ूर पेश करता हूँ, जिसे सुनकर आलमपनाह दाँत तले उँगली दबा लेंगे। कहते-कहते वकील ने कुछ काग़ज़ात त्रिलोकीनाथ के हाथ में पकड़ा दिए। कमलापति ने रीडर के हाथ में तहरीर देते हुए पढ़ने का हुक्म दिया। तहरीर हस्ब जैल थी :—

नामुराद आशिक़

कल शबे वस्ल में क्या जल्द कटी थीं घड़ियाँ।
आज क्या मर गये घड़ियाल बजाने वाले॥

इस आवाज़ को सुनकर मैं रुक गया। अँधेरी शब थी। आलम पनाह को मालूम है कि हिन्द में दुनियाए जंग ज़ोर पर है। वजह सवारी महँगी होने के मैं और मेरे लेखक साहब दर्बारे-आली के लिए पैदल ही रवाने हो गए थे। बग़रज़ ज़रा सुस्ताने के हम लोग वहीं दीवाल के सहारे बैठ गए। फिर सुनाई पड़ा:—

हिज्र की यह रात कैसी रात है।
एक मैं हूँ या ख़ुदा की ज़ात है॥

थोड़ी देर बाद फिर आवाज़ आई :—

अल्लाह ! हो गई है जवानी की सुबह शाम।
लेकिन शबे फ़िराक़[1] की पैदा सहर नहीं॥

कुछ-कुछ सुबह के आसार मालूम होने लगे थे। पाँव की आवाज़ से मालूम होता था कि कोई बेचैनी के साथ टहलता हुआ कह रहा है :—

'मूनिम' जो आज हिज्र की शब काटनी पड़ी।
नींद ऐसी सो गई कि, न आई तमाम रात॥

हम लोगों की दिलचस्पी बढ़ती जाती थी। वहाँ से हटने को दिल नहीं चाहता था। इस मर्तबा भर्राए हुए गले से निकला :—

कल गया था वह जिसे बीमारे हिज्रां[2] छोड़कर।
जा रहा है आज वह हस्ती का सामाँ छोड़कर।

अभी रात बाकी थी। हम लोगों ने देखा—एक पागल-सा आदमी दर्वाज़ा खोलकर बड़बड़ाता हुआ बाहर निकला :—

ईज़ा[3] शबे फ़ुर्क़त[4] की उठाई नहीं जाती।
अब वस्ल की सूरत कोई पाई नहीं जाती॥

मैं हैरत के साथ उसकी तरफ़ देखने लगा। उसने कहा :—

शबे फ़ुर्क़त में रो-रो कर सहर की।
हक़ीक़त क्या कहूँ मैं रात भर की॥

१—जुदाई। २—वियोग। ३—तकलीफ़। ४—जुदाई।

मैंने ज़रा उसके नज़दीक जाकर पूछा—क्या रात को आप ही हस्ती का सब सामान छोड़कर जा रहे थे ? उसने ग़मगीन होकर कहा—हाँ जा तो रहा था; लेकिन :—

नातवानी[1] ने बचाई जान मेरी हिज्र में ।
कोने कोने ढूँढ़ती फिरती क़ज़ा[2] थी मैं न था ॥

उस रोज़ मुझे मालूम हुआ कि एक मज़बूत आशिक़ के सामने क़ज़ा की कोई हस्ती नहीं है । मैंने कहा आख़िर अब आप रो क्यों रहे हैं ? वजह मालूम हुई :—

हम बेकसी पे अपनी न रोएँ तो क्या करें ।
दिल सा रफ़ीक़[3] हाय हमारा जुदा हुआ ॥

मैंने समझाया- सिर्फ़ इतनी सी बात के लिए तो रोना बेकार है क्योंकि :—

किस किस तरह की दिल में गुज़रती हैं हसरतें ।
है वस्ल से ज़ियादा मज़ा इन्तज़ार में ॥

इसके अलावा दिलासा देते हुए कहा :—

क्या फ़ायदा है रोने से ऐ चश्मे[4] ज़ार[5] बस ।
कब अश्क़[6] दिल की आग लगी को बुझा सका ॥

१—दुर्बलता, कृशता, दुर्बलापन । २—मौत । ३—मित्र । ४, ५—गीली आँखें । ६—आँसू ।

मैंने समझाया क्या अपने सर बला मोल ले ली। इनके आँसू तो आग बरसाने लगे :—

उस बिन जहान कुछ नज़र आता है औरही।
गोया वह आसमान नहीं वह ज़मीं नहीं[1] ॥

× × × ×

गर आँख अटकती न किसी शोख से जाकर।
तो दिल भी कहीं शोख गिरफ्तार न होता ॥

× × × ×

हैरत है मुझे इस पर वह चैन से है कैसे।
जिस बिन क़रार मेरे जी को कहीं नहीं है ॥

× × × ×

क्या जाने उसे वहम है क्या मेरी तरफ से।
जो ख्वाब में भी रात को तनहा नहीं आता ॥

× × × ×

सारी दुनिया से हम अनजान बने जिनके लिए।
हाय हमसे वही अनजान बने बैठे हैं ॥

ये रो रहे थे। हम लोग देख रहे थे। इन्हें समझाने के लिए गोया हम लोगों के पास ज़बान ही नहीं थी। इतने में ख़ुशक़िस्मती से इनका क़ासिद आ गया; उसने कहा—लाओ ख़त लिखकर दो। एक मर्तबा फिर क़िस्मत में ठोकर देकर देखें। लेकिन वह इतना बेज़ार हो चुका था कि कहने लगा :—

१—जैसे।

मज़े से अपने घर बैठे हुए बातें बनाते हैं।
क़यामत उनके वादे हैं न आते हैं न जाते हैं ॥

× × [1] × [2] ×

इन्तज़ार उनका अबस[1] ऐ दिले मुश्ताक़[2] न कर।
वे किसी और के मेहमान बने बैठे हैं ॥

क़ासिद को इन मामलों में काफ़ी महारत थी। उसने कहा—तुम तो ख़त लिखकर दो। रोना-धोना बन्द करो। मैं सब ठीक कर लूँगा! बमुश्किल तमाम उसने क़लम की तरफ़ देखा, उठाने की कोशिश करने लगा। लेकिन :—

अल्लाह! हो गया था वह कमज़ोर यहाँ तक।
उठती न थी हाथों से क़लम हा सितम सितम ॥

मैंने क़लम उठाकर उसके हाथ में दिया। बमुश्किल तमाम रो-रोकर उसने हब्बे जैलचन्द क़लमे अपनी सितमज़दह को लिखे—

मोहब्बत में नहीं है फ़र्क़ जीने और मरने में।
जिसे हम देखकर जीते हैं उस काफ़िर पे दम निकले ॥

× × × ×

अजल[3] न आई शबे हिज्र में और तूने फ़लक।
बेअजल हमको तमन्नाए अजल में मारा ॥

× × × ×

कहूं क्या "ज़ौक़" अहवाले शबे हिज्र।
कि थी यक-यक घड़ी सौ सौ महीने ॥

× × × [4]

मेरे दिल से कोई पूछे शबे फ़ुर्क़त की बेताबी।
यही फ़रियाद थी लब[5] पर कि यारब जल्द दम निकले ॥

१—व्यर्थ। २—प्यारा, जिसको किसी की कामना हो। ३—मौत। ४—बेचैनी। ५—ओंठ।

चैन इस दिल को न इक आन तेरे बिन आया।
दिन गया रात हुई रात गई दिन आया॥

× × × ×

वक्त दो मुझपर कठिन गुज़रे हैं सारी उम्र में।
आप के आने के पहले, आपके जाने के बाद॥

× × × १

पास जा बैठा जो मैं कल यक तेरे हमनाम के।
रह गया मैं नाम सुनते ही कलेजा थाम के॥

× × × ×

कल जो मेरे सामने तेरा किसी ने नाम लिया।
दिले सितमज़दह को हमने थाम थाम लिया॥

× × ×२ ×

इश्क़ हमारे ख़्याल पड़ा है ख़्वाब गया आराम गया।
दिलका जाना ठहर गया है सुबह गया या शाम गया॥

× × × ×

मुमकिन नहीं कि इश्क़ के हाथों से जाँ बचे।
पैदा हुआ है मुझको ये आज़ार बेतरह॥

लिखते-लिखते उसे इतने ज़ोर का ग़श आया कि सम्हालते-सम्हालते भी गिर ही पड़ा। क़ासिद ने चटपट काग़ज़ को मोड़ा और चलने लगा। तब तक हज़रते आशिक़ ने ज़रा सी आँख खोलकर कहा :—

ख़त दीजियो छिपा के मिले वह अगर कहीं।
लेना न मेरे नाम को, ऐ नामावर३ कहीं॥

१—नाम-राशी,एक ही नाम वाला। २-नींद,सपना। ३-पत्र-वाहक।

ख़ुदा जाने,नाम छिपाने में क्या राज़ था ! हम लोगों की हैरत बढ़ती जाती थी; बिना पूरा तमाशा देखे हटने को जी न चाहा; जम कर बैठ गए। क़ासिद के चले जाने पर उसने आसमान की तरफ़ देखकर कहा :—

वह क़ातिल के यहाँ ख़त ले गया है।
ख़ुदाया ख़ैर कीजो नामावर की ॥

मैंने अपने दिल में कहा— इसकी माशूक़ा भी क्या बला है, जिससे बेचारे को क़दम-क़दम पर इस क़दर दहसत हो रही है। क़ासिद को गए काफ़ी देर हो गई थी। इसका दिल घबरा रहा था। कभी-कभी बक उठता था :—

हमने तो जाना था क़ासिद जल्द लाएगा ख़बर।
क्या ख़बर थी जाके वाँ ख़ुद बेख़बर हो जायगा ॥

× × × ×

खोया गया हूँ देके पता नामावर को मैं।
अपनी ख़बर को जाऊँ इलाही किधर को मैं ॥

ख़ैर ! किसी क़दर वक्त कटा। क़ासिद लौटा। उसने बतलाया कि वे आ रही हैं। जनाबे आशिक़ बेचैनी से इन्तज़ार करने लगे। मैंने क़ासिद को अलग ले जाकर पूछा — वहाँ जाकर माशूक़ा से क्या बातचीत हुई तो उसने जवाब दिया :—

देख मुझको तुरत उस शोख़ ने पूछा "ताबाँ"।
क्या मेरे हिज्र में जीता है वो ग़मनाक अभी ॥
२

मैंने सवाल किया— जब वे इस क़दर बेमुरव्वती से पेश आईं तो तुमने उन्हें यहाँ आने के लिए राज़ी कैसे कर लिया ?

१—ख़बर ले जाने वाला। २— दुःख-दायी।

उसने हँसते हुए कहा — जनाब ! यह तो मेरा रोज़ का काम है उनकी बात का जवाब हाज़िर था :—

एक दिन भी उसको जीना हिज्र में था नागवार।
पर उमीदे वस्ल में बरसों गुज़ारा हो गया ॥

मैंने उसकी पीठ ठोंककर कहा—वल्लाह, तुमने तो कमाल कर दिया। इसपर वह बड़े फ़ख्र से बोला—हुज़ूर ! इसी हुनर की बदौलत तो हम लोग लम्बी-लम्बी रक़में झाड़ते हैं, वरना मुझे पूछे कौन ? बात सच थी। हम लोग फिर जनाबे आशिक़ के पास पहुँचे तो हज़रत बड़बड़ा रहे थे :—

करार करके न आया वो संगदिल काफ़िर।
पड़े क़रार पे पत्थर ये कुछ क़रार हुआ ॥

× × × ×

पाता नहीं सुराग़[1] करूँ किस तरफ़ तलाश।
दीवाना दिल किधर को गया ! हाय क्या हुआ ॥

क़ासिद ने ज़रा डाँटकर कहा-- अमाँ, सब्र भी तो रक्खो। तुमने तो बेमसरफ़ आसमान सर पर उठा रक्खा है। इसपर कम्बख़्त कहने लगा—

न करता ज़ब्त जो नाला तो बस इतना धुआँ होता।
कि नीचे आसमाँ[2] के और नया यक आसमाँ होता ॥

देखा हुज़ूरेआज़म ! बावजूद आपके एक नया आसमान पैदा करने का दावा रखता है। थोड़ी देर बाद फिर बोला —

जब्त से मेरे थम रहा है सरश्क़[3]।
वरना अबतक तो बह गया होता ॥

---

१ — असह्य। २— टोह, पता। ३—आकाश मंडल

मुस्कान



न करता ज़ब्त जो नाला
तो बस इतना धुआँ होता।
कि नीचे आसमाँ के और नया
यक असमाँ होता॥

(पृष्ठ १००)

अब मुझे मालूम हुआ कि आलमपनाह की ख़ुदाई बहा डालना आशिक़ों की आँखों का खेल है।

इधर हज़रते आशिक़ की लम्बी-लम्बी आहें खिंच रही थीं, उधर किसी के पाँव की आवाज़ सुनाई पड़ी। लेकिन अफ़सोस! उन क़दमों का कमरे में पड़ना और आशिक़ का ग़श खाना, यह ऐसे ही हुआ जैसे गर्दन पर तलवार के पड़ते ही सर का ज़मीन पर लोट जाना। हम लोग इनकी माशूक़ा की ख़ातिर-तवाज़ह करना तो भूल गए, पड़ गए इनकी दवा-दारू के चक्कर में। रब की क़ुदरत से जब इन्हें ज़रा होश आया तो मैंने पूछा— क्या हो गया इतनी जल्दी जनाब को? तो आपने फ़र्माया :—

आगे ख़ुदा को इल्म है क्या जाने क्या हुआ।
बस उनके रुख़ से याद है उठना नक़ाब का॥[1]

ख़ुदा जाने उनके नक़ाब में किस क़िस्म की बारूद थी जो सीधे जाकर इनके जिगर में भड़की और हम लोगों को पता भी न चला। फिर मेरे कान में धीरे से बोले :—

मैं मरीज़े इश्क़ हूँ मेरी दवा परदे में हो।

मैं सब कुछ समझ गया और चाहता था कि लोगों को हटाकर इन्हें इनकी माशूक़ा के साथ तनहाई में छोड़ दूँ लेकिन इतने ही में कोई हकीम साहब को लेकर पहुँच गया। उन्होंने इनकी नब्ज़ टटोलकर कहा— इस वक्त माशूक़ा का इनके रूबरू आना सख़्त मुज़िर है, क्योंकि इन्तेहाए ख़ुशी में इनके दम तोड़ देने का खटका है। हकीम साहब की बात उन्हें पसंद न आई, इसलिए मुझे पास बुलाकर कहा :—

१—घूँघट, बुरक़ा।

बीमारे मोहब्बत की बस इतनी दवा करना।

जानूँ पे लिटा करके दामन से हवा करना॥

मैंने थोड़ीसी ताक़त की दवा लेने के लिए इसरार किया, मगर उन्होंने दवा की सूरत देखने तक से इन्कार कर दिया। मैंने ज़रा हँसकर पूछा :—क्या उन्हें भेज दूँ?

जवाब मिला —

२

मैं नज़अ में हूँ आएँ तो अहसान है उनका।
लेकिन ये समझ लें कि तमाशा नहीं होता॥

मैंने एक आदमी को इशारा किया, वह इनकी माशूक़ा को लिवा लाया। ज़रा उस वक्त का वाक़या क़ाबिले ग़ौर है :—

३

इन्तेहाए[3] लाग़री से जब नज़र आया न वो।
हँसके बोलीं वो ज़रा बिस्तर को झाड़ा चाहिए॥

मैंने टटोलकर दिखलाते हुए कहा— बीमार ये पड़ा है, आप बिस्तर झाड़ने की तकलीफ़ गवारा न करें। इसके बाद उन्होंने आशिक़ के सीने पर हाथ रखकर बड़े अन्दाज़ से कहा —

४

अक्सर जो इस ज़मीन को होता है ज़लज़ला।
शायद गिरा है जिस्म किसी बेक़रार का॥

इस वक्त की ठिठोली वे बर्दास्त न कर सके और जलकर बोले —

आँखें न जीने देंगी तेरी बेवफ़ा मुझे।
इन खिड़कियों से झाँक रही है क़ज़ा मुझे॥

१—अंचल। २—मृत्यु के समय जब आँखें अधखुली रह जाती हैं, चन्द्रायन। ३—चरमसीमा। ४—भूकम्प।

होश जाता रहा निगाह के साथ।
सब्र रुख़सत हुआ यक आह के साथ॥
× × × [1] ×
क्या हमें फ़ायदा आँखों से बक़ौले सौदा।
भरनज़र तुम को न देखा कभी डरते डरते॥
× × × ×
भरनज़र तुमको न देखा कभी डरते डरते।
हसरतें जी की रहीं जी ही में मरते मरते॥

इन गरमागरम बातों से संग-दिल माशूक़ा की आँखें भी पसीज कर टपकने लगीं। आशिक़ ने करवट बदलते हुए कहा :—

मुत्तसिल [2] रोतेही रहिए तो बुझे आतिश [3] दिल।
एक दो आँसू तो और आग लगा जाते हैं॥

आशिक़ चाहे माशूक़ा के जूते खाकर भी किसी से न कहे; लेकिन माशूक़ा को इतनी बर्दाश्त कहाँ? वे उठकर बोलीं—माफ़ कीजिएगा, मैं जाना चाहती हूँ। आशिक़ ने ग़मगीन होकर कहा—

नाम आते ही लिया आपने घर जाने का।
करके आए थे क्या सामाँ मेरे तड़पाने का॥

लेकिन माशूक़ा इनकी बात पर कोई ख़्याल न करके चलने को तैयार हो गई, तब इन्होंने कहा :—

न मानोगे, जो जाते हो तो इतना ही बता जाओ।
मिलोगे कब? रखें उम्मेद? या क़िस्सा ख़तम कर दें॥

जवाब था :—

मिलने की बताएँ क्या शायद ही मिले फ़ुर्सत।
मिल लेंगे क़यामत में मिलना ही अगर होगा॥

१—कथनानुसार। २—लगातार। ३—आग।

आशिक़ कलेजा थामकर बोला :—

जाते हुए कहते हो क़यामत को मिलेंगे ।
क्या ख़ूब ! क़यामत का है गोया कोई दिन और ॥

× × × ×

अगर जाते हो जाओ शौक़ से मैं कुछ नहीं कहता ।
मगर तुम यक नज़र बेताबिए[1] दिल देखते जाओ ॥
तड़पता है बरंगे[2] मुर्ग़[3] बिस्मिल देखते जाओ ।
कहाँ जाते हो आओ तुम मेरा दिल देखते जाओ ॥
दमे[4] आख़िर[5] है यक बेकस की मुश्किल देखते जाओ ।
मुझे देखो न देखो रुख़्सते दिल देखते जाओ ॥

माशूक़ा के क़दम कमरे के बाहर पड़ते ही वह बड़े ज़ोर से चीख़ उठा :—

मुँह मोड़ के जाते हो ज़रा देख तो लो तुम ।
मरता है कोई आशिक़े दिलगीर इधर भी ॥

लेकिन वहाँ कौन सुनता था ? वे इठलाती हुई बाहर निकल गईं । उनके जाते ही बेचारा कहने लगा :—

इस जफ़ा पर भी तबीयत उस पे बस आ ही गई ।
यक अदा ज़ालिम की कुछ ऐसी थी जो भा ही गई ॥

× × × ×

याद आता है तो क्या फिरता हूँ घबराया हुआ ।
चम्पई रँग उसका और जोबन वो गदराया हुआ ॥

१—बेचैनी । २—भाँति । ३—पक्षी । ४—साँस । ५—अंतिम ।

मुस्कान



नावक अन्दाज़ जिधर दीदए जानाँ होंगे।
नीमबिस्मिल कई होंगे कई बेजाँ होंगे॥ (पृष्ठ १०५)

सुबह होते ही जो वह ग़ायब हुआ महताब[1] सा।
वस्ल की यह रात थी या हमने देखा ख़्वाब सा॥

इतना कहते-कहते उसने आँखें उलट दीं। क़ासिद दौड़ पड़ा। माशूक़ा को आधे रास्ते से वापस आना पड़ा। उनके आने पर उसने किसी क़दर आँख खोलने की कोशिश करते हुए कहा :—

तुम आए भी जो बालीं[2] पर तो ऐसे वक़्त पर आए।
कि फ़र्ते जोफ़[3] से[4] हम कर नहीं सकते इशारा तक॥

× × × ×

अजल[5] सौ बार आई "ज़ौक़" पर जब तक न तुम आए।
न पाया दम निकलने में, क़ाबू इसको कहते हैं॥

कहते-कहते उसने दमे आख़िर कर दिया। माशूक़ा को हिक़ारत की निगाह से देखता हुआ एक आदमी भर्राए हुए गले से कह पड़ा —

मुँद गईं खोलते ही खोलते आँखें[6] हैं[7]।
ख़ूब वक़्त आए तुम इस आशिक़े बीमार के पास॥

आख़िरी साँस के साथ बेचारा अपने दोस्तों को आगाह करता गया :—

नावकअन्दाज़[8] जिधर दीदए[9] जानाँ होंगे।
नीमबिस्मिल[10] कई होंगे कई बेजाँ[11] होंगे॥

१—चाँद। २—सिरहाना। ३—अधिकता। ४—ग़श, बेहोशी। ५—मौत। ६—तीरन्दाज़: माशूक़ा। ७—आँख। ८—निष्प्राण।

हालाँकि हम लोगों को देर हो रही थी, मगर दफ़नाने के पहले वहाँ से हटना नामुनासिब समझकर जनाज़े के साथ गए। वह गाता जा रहा था :—

प्रेम-प्रमत्त मयूरों पर घन-बाण नहीं चलते हों।
प्रेमी-परवाने दीपक में जहाँ नहीं जलते हों॥
जहाँ न मधुकर मधु पीकर बेगाने हो जाते हों।
जहाँ न वैभव-हीन सुमन अव्यक्त व्यथा पाते हों॥
जहाँ प्रेम की थाह नहीं है सुख का ओर न छोर।
चलो चलें उस ओर सखे! अब चलो चलें उस ओर॥
जहाँ न मधु-मय मुकुल धूल में मिलकर हैं मिट जाते।
जहाँ न चातक निज आँसू से अपनी प्यास बुझाते॥
जहाँ न कोयल, कुमुद-वृन्द नित विषम व्यथाएँ पाते।
जहाँ न कोयल से प्यारे ऋतुराज बिलग हो जाते॥
जहाँ न प्रेमी की आँखें हैं रो-रो करतीं भोर।
चलो चलें उस ओर सखे! अब चलो चलें उस ओर॥
उसी ओर बस चलो चलें अब वहीं करें घर-बार।
वहीं बसाएँगे हम अपना एक पृथक संसार॥
प्रेम-सिन्धु में जीवन-नौका ले सनेह-पतवार।
निर्भय होकर चलो चलें हम बेसुध हो उस पार॥
इस जीवन का सार मिलेगा और हमें उस ओर।
चलोचलें बस शीघ्र सखे! अब चलो चलें उस ओर॥

जिस वक्त लोग मैयत की आख़िरी रस्म अदा कर रहे थे;

मरहूम की माशूक़ा रोती बिलखती आ पहुँची और—

लिपटकर तुरबते आशिक़ से; रो-रो कर कहा उसने।
गली मैंने कही थी तुम तो दुनिया छोड़े जाते हो॥

आह जानेमन —

कल तो कहते थे कि बिस्तर से उठा जाता नहीं।
आज दुनिया से चले जाने की ताक़त आ गई॥

मैंने सुना तुरबत के अन्दर से साफ़ आवाज़ आई।

फ़ना के बाद अब उल्फ़त जताई जाती है।
शहीदे नाज़[1] की तुरबत सजाई जाती है॥

तहरीर पूरी ख़त्म होते न होते ख़ुदावन्दतालां ने अज़हद ग़ुस्से के साथ हुक्म दिया— इन तमाम बेवफ़ा, क़ातिल, क़हर-नाज़ला, जानानए हिन्द को इसी वक्त चहारदीवारियों के अन्दर बन्द करा दो। ऐलान कर दो कि आज की तारीख़ से अगर कोई भी जल्वए जानाना सरे राह चलता-फिरता नज़र आएगा तो सख़्त सज़ा का मुस्तहक़ होगा।

हालाँकि यह ग़ैरक़ानूनी हुक्म महकूमे[2] ख़ुदा तक को पसन्द नहीं आया, लेकिन हुक्मए आलमपनाह में कौन दख़ल दे सकता था? सब चुपचाप बैठे रह गए। हिन्दुस्तान में ढिंढोरा पीटा गया :—

सुन लो सब लोग हुक्म आलमपनाह ख़ुदावन्द ताला त्रिलोकीनाथ का— आज से कोई भी जल्वए जानानए हिंद सरे-राह चलता-फिरता नज़र न आवे, वरना सख़्त सज़ा पाएगा।

१— नाज़ पर मिटने वाला। २-कारिन्दे, अनुचर।

ढिंढोरा पीटनेवाले के चारों तरफ़ भीड़ लग गई; जिसने इस अजीबोग़रीब हुक्म को सुना उसीने कानों पर हाथ रख लिया। बेचारी औरतें नज़रबन्द हो गईं। मर्दों के सर पर काम का पहाड़ टूट पड़ा। आशिक़ाने हिंद ताड़ के पेड़ से गिर पड़े। कितनों ने माशूक़ाओं की जुदाई के ग़म में ज़हर खाकर ख़ुदकुशी करली। उस दिन से जब कभी कोई औरत बवजह सख़्त ज़रूरत निकलती भी है तो अपने को चारों तरफ़ से अच्छी तरह कपड़े से ढक लेती है, ताकि ख़ुदावन्द के कारिन्दे उसे पहचान न सकें।

ख़ुदावन्द का ऑर्डर ख़त्म होते ही दिलावर ने बाअदब झुककर सलाम किया और चलने लगी।

वज़ीरे आज़म ने रोकर कहा —अभी तो तुम्हारा बयान बाक़ी है।

दिलावर ने बेख़ौफ़ होकर कहा — लेकिन क़ानून के मुताबिक़ मुझे इसी वक्त जाकर अपने मकान में बन्द हो जाना चाहिए। हुज़ूर मुझे एक परमिट[1] लिख दें, ताकि आलम-पनाह के कारिन्दे मुझे पास[2] हो जाने दें।

दिलावर की दिलाधराना तक़रीर से आलमपनाह निहायत ख़ुश थे। उन्होंने वज़ीरेआज़म को मुख़ातिब करते हुए फ़र्माया— एक ऐसा क़ानून बना दो जिसके मुताबिक़ पढ़ी-लिखी या पढ़ने-लिखनेवाली औरतें जो दिलावर सरीखी हों, आज़ादी से घूम सकें, उनके ऊपर अगर कोई भी नौजवाने हिंद नज़र उठाए तो वो बेख़ौफ़ोख़तर उसके ऊपर जिस हथियार से चाहें वार कर सकें।

१—परवानगी। २—जाने देना।

ऐसी मार के ख़िलाफ़ कोई दावा अगर कभी पेश किया जाय, तो उसपर कोई ऐक्शन[1] न लिया जाय। मगर इस क़ानून को प्राइवेट[2] रक्खो, ऐलान मत करो।

अर्सेएदराज़[3] तक तो यह क़ानून ख़ुदावन्द की क़ानूनी किताबों में ही घूमता-फिरता रहा। चंद ग़ैर जानाना लोगों को अगरचे यह क़ानून मालूम भी था, तो उन्होंने इसे ज़ाहिर करके ख़ामख़ाह अपने ही सर आफ़त मोल लेना ठीक नहीं समझा। इधर कुछ दिनों से तालीमे जानाना बढ़ जाने पर होशियार औरतों ने अपने मतलब का क़ानून ढूँढ निकाला। उसी वक़्तसे वो आज़ाद होकर तनहा[4] घूमने-फिरने लगीं। बवक़्ते ज़रूरत कभी-कभी उन्हें क़ानूने ख़ुदावंदी का पूरी तरह से इस्तेमाल करते हुए भी देखा गया है, लेकिन चूँकि हिंदमें कोई दूसरा हथियार लेकर चलने का हुक्म नहीं है इसलिए ऐसे मौक़ों पर अक्सर चप्पलें या ऊँची एड़ियों की जूतियाँ हीं चलती हुई देखी गई हैं। हाँ, कहीं-कहीं अगर मामला संगीन हुआ तो तीरे नज़र भी चल जाता है।

देखा देखी कुछ ख़ुदाई ऐक्ट से नावाक़िफ़[5] औरतें भी निकलने लगी हैं। लेकिन बवजह नावाक़िफ़कारिए अपने हुक़ूक़ के वे कभी-कभी ख़तरे में पड़ जाती हैं।

उस दिन त्रिलोकीनाथ कुछ उदासीन से थे। इस कारण समय रहते हुए भी बहँस बन्द करके पेशी बढ़ा दी गई।

१—विरुद्धाचरण पर कार्यवाही। २—अपने तक सीमित रखना, दूसरों पर न खोलना। ३-बहुत समय। ४ अपरिचित; अनजान।

चौथी पेशी

चौथी पेशी पर पुकार होते ही सबसे पहले मुद्दालेह के वकील ने अर्ज़ किया— आलमपनाह ! कामयाबिए आशिक़ की सफ़ाई में मैं बतौर गवाह अपने दोस्त कामयाब आशिक़ को पेश करना चाहता हूँ। इज़ाजत बख़्शी जावे।

इज़ाजत मिल गई। कामयाब आशिक़ ने बोलना शुरू किया—वज़ीरे आज़म व आलमपनाह ! वैसे तो मेरी परेशानियाँ आप लोगों को मेरे दोस्त वकील साहब ने बतला ही दी। लेकिन मुझे उतना रंज अपनी परेशानियों का नहीं है जितनी ख़ुशी कामयाबी हासिल कर लेने की है। मेरी मोकम्मिल कामयाबी यह तहरीर बतलाएगी, कहते हुए आशिक़ ने कुछ काग़ज़ वज़ीरे आज़म के हाथ में दे दिए; जिसका मज़मून हस्बे ज़ैल था —

रहमते माशूक़ा

मुझको गले लगाके ये उनका सवाल था।
क्यों जी इसी के वास्ते इतना मलाल था॥

बस इतना सुनना था कि मैं बाँसों उछल गया। कलेजा साढ़े तीन हाथ का होकर उनसे लिपट जाने के लिए ऊधम मचाने लगा। बदला निकालनेवाले मेरे सारे इरादे धूल में मिल गए। मैं बदहोश-सा होकर उनके गले में झूमकर पूछ बैठा —

तुम्हें मेरी मुहब्बत की क़सम सच सच बता देना।
गले में डालकर बाहें मनाना किससे सीखा है॥

जवाब मिला —

न कुछ हम हँसके सीखे हैं न कुछ हम रोके सीखे हैं।
जो कुछ थोड़ा सा सीखे हैं किसी के होके सीखे हैं॥

ओहो ! इतना सुनकर तो मैं बिलकुल पागल हो गया। मुझसे कुछ कहते ही न बना। मुझे चुपचाप बैठा देखकर वे कहने लगीं— इस तरह ख़ामोश क्यों बैठे हो ?

आके बाज़ारे मोहब्बत में ज़रा सैर करो ।
लोग क्या कहते हैं क्या लेते हैं क्या देते हैं ॥

आज मेरी निहायत ख़ुशक़िस्मती थी कि वे ख़ुद बुला रही थीं। मैं जब नज़दीक खिसक गया तो —

बोलीं वो सीने पै मेरे रख के हाथ ।
कहिए अब तो इज़्तराबे[1] दिल गया ॥

इस वक्त मुझे उनकी ख़ूबसूरती इतनी ज़्यादे मालूम हो रही थी कि मैं यह फ़ैसला न कर सका कि चमक शमा में ज़्यादे है या उनके रुख़ पर ? उस वक्त इसकी ठीक-ठीक जानकारी हासिल करने के लिए :—

रुख़े रोशन के आगे मैं शमाँ रख करके यूँ बोला ।
उधर जाते हैं देखें या इधर परवाने आते हैं ॥

उनके सामने शमाँ रखते ही सचमुच दो-तीन परवाने उनके रुख़ पर टूट पड़े। इसपर वो बेतरह बिगड़ पड़ीं, मैंने कहा :—

रूठना तब तुम्हें मुनासिब था ।
जो तुम्हें मैंने कुछ कहा होता ॥

लेकिन यही तो बात है कि हम आशिक़ाने हिंद अठ्वलन नो माशूक़ाओं से कभी ख़फ़ा होते ही नहीं और अगर ख़ुदा न ख़ास्ता कभी ऐसी ख़ुशक़िस्मती दोआए हक़ से नसीब भी हो जाय तो फ़ौरन मन जाने के लिए कमर कसकर दस्तबस्त: खड़े रहते हैं

१— बेचैनी, विकलता ।

बस माशूक़ा मनाने का बहाना भर कर दे। लेकिन माशूक़ाएँ ख़ुदा न करे कभी बिगड़ें, ये बिगड़कर जल्दी मानना जानतीं ही नहीं। यही हाल इनका हुआ। अब मैं सोचने लगा :—

ताबाँ[1] बताके यार को क्योंकर मनाइए।
अबकी हुआ है मुझसे वो बेज़ार[2] बेतरह॥

बड़ी देर के बाद मुझे अपने दोस्त की सलाह याद आगई: मैंने कहा —

चुपके से कान में सुनो पर्दे की बात है।

और मुँह पास आते ही चट बोसा लेकर कह दिया —

ये पर्दा वर्दा कुछ नहीं सब वाहियात है॥

इस पर उन्होंने चट से मेरे गाल पर एक गरमागरम चाटा रसीद कर दिया। मैं सन्न करके रह गया और माफ़ी माँगी —

बेख़ुदी[3] में ले लिया बोसा ख़ता कीजे मुआफ़।
इस दिले बेताब की साहब ख़ता थी मैं न था॥

अब तो मेरी आफ़त आगई। उन्होंने बिगड़कर कहा :—

ला ज़रा देखूँ तो दिल कैसा है रहता है कहाँ।
बेख़ुदी उसकी मिटा दूँ होश में ला दूँ उसे॥

मैं यह सोचकर ग़मगीन हो गया कि कहीं सचमुच ये कलेजा फाड़कर दिल के टुकड़े-टुकड़े न कर डालें, नहीं तो मैं कहीं का न रहूँ। मैंने डरते-डरते जिगर थामकर कहा :—

वस्ल की शब आप बोसों पर ख़फ़ा होने लगीं।
क्या मज़े की बात थी क्यों बदमज़ा होने लगीं॥

१— प्रकाशवान, चमकदार। २—तंगआना, खीझना। ३—बेहोशी, विसुधि।



दरियाए हुस्न और भी दो हाथ बढ़ गया।
अँगड़ाई जो नशे में ली उसने उठाके हाथ॥ (पृष्ठ ११३)

उन्हें ख़ामोश देखकर मेरा हौसला ज़रा आगे बढ़ा—

१

ले लिया गर एक बोसा बन्दापरवर क्या हुआ।
प्यार में लब रख दिए प्यारे लबों पर क्या हुआ॥

२

ख़ामोशी को रज़ामन्दी की अलामत समझ कर मैंने ज़रा नज़दीक खसक कर कहा:—

यक बोसा तलब करते हैं आज हुस्न की ख़ैरात।
दो ऐसे अमूरात[3] में सोचा नहीं करते॥

लेकिन:—

बोसा जो मैंने तलब किया हँस के वो बोले।
यह हुस्न की दौलत है लुटाई नहीं जाती॥

उनकी हँसी ने मेरा हौसला बढ़ा दिया। मैंने आजिज़ी के साथ कहा:—

एक बोसे के तलबगार हैं हम।
और माँगें तो गुनहगार हैं हम॥

इतने में उन्हें अँगड़ाई आगई;

दरियाए हुस्न और भी दो हाथ बढ़ गया।
अँगड़ाई जो नशा में ली उसने उठा के हाथ॥

उनका बोसा देने का कोई रुख न देखकर मैंने फ़ब्ती कसी:—

ख़ुदा जाने जो हसरत और कुछ होती तो क्या होना।
ज़रा से एक बोसे पर तुम्हारा दम निकलता है॥

अबकी वो झिड़ककर बोलीं:—

जब एक बार कह दिया तो मान जाइए।
अपनेही हाथ चूमिए क़ुर्बान जाइए॥

१—दास-रक्षक। २—निशानी, चिन्ह। ३—कामों।

कहकर उन्होंने करवट बदल ली। मैंने पीछा छोड़ना ठीक न समझकर कहा :—

कौन कहता है कि बोसा दो हमें।
मुँह फ़क़त रख लेने दो रुख़सार पर॥

इस बार वो झुँझला पड़ीं :—

कहाँ की आफ़तें मैंने लगा लीं अपने सीने से।
चलो लब चूम लो मेरा मगर रुख़सार मत छूना॥

लेकिन एक शर्त है ;

सब सहेंगे हम अगर लाख बुराई होगी।
पर कहीं आँख लड़ाई तो लड़ाई होगी॥

मैं बेतरह और बेतहाशा राज़ी हो गया; लेकिन अफ़सोस! ज्योंहीं बोसे के लिए मुँह सामने किया, उन्होंने आँखों में आँखें डालकर मुँह फेर लिया। मेरे मुँह से एकदम निकल पड़ा :—

बोसा लबों का देने कहा कहके फिर गया।
प्याला भरा शराब का अफ़सोस गिर गया॥

काम बिगड़ जाने पर मुझे सूझा कि यह उल्टी-सीधी शर्त उनकी चाल थी। तब मैंने ग़ुस्से में भरकर कहा :—

तुम्हारे शामज़दो[1] इशवा[2] अदाओ नाज़ रहज़न हैं।
यही चारों लुटेरे लूटते हैं क़ाफ़िला दिल का॥

उन्हें ख़ामोश देखकर मुझे फिर कहना पड़ा :—

बताती है ये अश्कों में हमारे ख़ून की सुर्ख़ी।
बहा है टूटकर आँखों के रस्ते आबला दिल का॥

१—शोख़ी, चपलता। २—बटमार।

जब इतने चीखने-चिल्लाने पर भी वो टस से मस न हुई तो मुझे आया कसकर गुस्सा ! फिर मरता क्या न करता :—

बोसा लिपट के लेही लिया मैंने ताव में ।
हाँ हाँ सुनी किसी की न उनकी नहीं नहीं ॥

× × × ×

लेकर के बोसा आखिर हम उनसे लिपट गए ।
वो हाथ पैर अपना पटकते ही रह गए ॥

लेकिन कलेजे में धुकपुकी लगी थी :—

तखलिए[1] में आज मैंने उनका बोसा ले लिया ।
देखिए डिगरी जो हो दावा तो दायर कर दिया ॥

थोड़ी देर रुककर मैंने फिर कहा :—

बेगिन्ती बोसे लेंगे रुखे बेनक़ाब के ।
आशिक़ हैं हम पढ़े नहीं इल्मे हिसाब के ॥

इतना सुनतेही उन्होंने गालों पर हाथ रख लिया । अब तो मैं ज़बर्दस्ती पर था ही, उनकी यह हरकत मुझसे बरदास्त न हुई—

फिर तो बोसे उनके अनगिन्ती लिए ।
दिन गिना करते थे इस दिन के लिए ॥

जब उन्होंने नहीं-नहीं किया तो मैंने धमकाया :—

जो कस कर चूम लूँगा इस नहीं पर ।
शिकन रह जायगी यूँहीं[2] जबीं पर ॥

अब मुझे तजुरबा होगया था कि घी टेढ़ी उँगली से ही निकलता है । इसलिए मैं अच्छी तरह ज़बरदस्ती पर उतर आया,

१—एकान्त । २—मस्तक ।

तो उन्होंने हाथ-पाँव ढीले कर दिए। मौक़ा देखकर मैंने कहा :—

दिल में तमन्ना वस्ल की है मुँह से है इन्कार ख़ूब।
हो गया मालूम "रौशन" भाव इस बाज़ार का॥

मैंने तो यूँहीं शिगूफ़ा छोड़ा था, लेकिन बात सच निकल गई; वो पूछ बैठीं :—

हसरतें क्या और हैं बाक़ी तमन्ना क्या रही।
रात अब थोड़ी सी है जो कुछ कहो जल्दी कहो॥

लेकिन हुज़ूरे आज़म!

अदा से उसने पूछा जब कि तेरी आरज़ू क्या है।
ख़ुशी में यूँ हुए बेख़ुद कि हम भूले तमन्ना तक॥

ख़ैर, मैंने सोच-समझकर कहा :—

पूछते क्या हो मुद्दआ क्या है[1]।
ख़ुद समझ जाओ पूछना क्या है॥

× × × ×

तुम समझ लो सोच लो तुम ताड़ लो पहचान लो।
बात अपने दिल की मैं अपनी ज़बाँ से क्या कहूँ॥

इतना सुनते ही उन्हें ज़रा हँसी-सी आगई और शर्म से गर्दन नीची हो गई। उस वक्त मेरे मुंह से एकदम निकल पड़ा :—

हया से सर झुका लेना अदा से मुस्करा देना।
हँसीनों को भी कितना सहल है बिजली गिरा देना॥

अब पता नहीं क्यों उन्होंने धीरे से कहा :—

शबे विसाल में गुल कर दो इन चिराग़ों को।
ख़ुशी के बज़्म[2] में क्या काम जलनेवालों का॥

१—अभिप्राय, उद्देश्य। २—रंग महल, क्रीड़ा-स्थल।

मैंने उस वक्त अच्छी तरह देख लिया कि उनके रुख पर नाराज़ी के कोई आसार नहीं थे और मैं चट उनके हुक्म की तामील करके लेट गया।

कामयाब आशिक़ की तहरीर ख़त्म होते ही मुद्दई के वकील ने आशिक़ से पूछा —

इसके बाद क्या हुआ ?

आशिक़ ने कहा-इसके बाद —

कुछ हम तो न समझे कि शबे वस्ल किधर थी।
टुक जुल्फ़ से जो रुख़ पे नज़र की तो सहर थी॥

वकील ने तानाकशी की — वल्लाह कमाल है! आप को जुल्फ़ से नज़र हटा कर रुख़ तक ले जाने में जितनी देर लगी उतनीही देर में सबेरा हो गया! तब आप कैसे कहते हैं कि आपको विसाल हासिल हो गया ? जनाब मैं कहता हूँ :—

शबे विसाल की कुछ और सुनाओ बातें।
शब कटी कैसे चलीं कौन कौन सी घातें॥

इस पर आशिक़ ने जवाब दिया :—

क्या पूछते हो हाल शबे वस्ल का हमसे।
यह बात है परदे की बताई नहीं जाती॥

मुद्दई के वकील को मुख़ातिब करके मुद्दालेह के वकील ने कहा— जनाब अगर कुछ समझ रखते हों तो सब बातें साफ़ हैं, इसके आगे और कुछ पूछना आशिक़ को क़त्दन शर्मसार करना है, और कुछ नहीं। वह आशिक़ है न कि संस्किरत या हिंदी का शायर, जो वस्ल के तमाम वाक़यात साफ़-साफ़ क़लमबन्द कर देते हैं। ज़रा आलमपनाह ग़ौरफ़र्मा हों, कहते हुए वकील ने कुछ काग़ज़ात वज़ीरे आज़म के हाथ में दे दिए, जिनमें निम्न-लिखित

हिंदी और संस्कृत के छन्द थे :—

बन में वृषभानुकुमारि मुरारिहिं को रुचिसों रस रूप पिए।
कल कूजत पूजत काम-कला विपरीत रची रति* केलि हिए॥
माणे सोहत श्याम जराय जरी अति चौकी चलै चल चारु हिए।
मखतूल[1] के झूल झुलावत "केशव" भानु मनो शनि अंक लिए॥

× × × ×

सुथरी सुशीली सुयशीली सुरसीली अति,
लंक लचकीली कामधनुष हलाका सी।
कहैं कवि "तोष" होती सारी ते निनारी जब,
कारी बदरी ते कढ़ै चन्द्र के कलाका सी॥
लोने लोने लोयन पै खंजन झमक वारौं,
दंतन चमक चारु चंचला चलाका सी।
साँवरे सुजान कान्ह तुम सों छिपाऊँ कहा,
सेज पै सुताऊँ आनि सोने की शलाका सी॥

× × × ×

रैन में जगाई कल करन न पाई इमि,
ललन सताई परयंक अंक महियाँ।
ससकि असकि कर कसकि बिताई निशि,
मसक प्रवीनी बेनी कीन्हो चित चहियाँ॥
भोरहिं न जागी अलसाइ गई सोय बाल,
सखिन जगाइबे को आनि गही बहियाँ।
चौंकि परी चकि परी औचक उचकि परी,
बकि परी जकि परी कहि परी नहियाँ॥

---

* सम्भोग का वह आसन जिसमें नायक नीचे और नायिका ऊपर रहते हैं। १ — काला रेशम (शुद्ध रूप = मखतूल)।

आलमपनाह ! चौथी लाइन में, " कीन्ही चित चहियाँ " क़ाबिले ग़ौर है। अब ज़रा "हरिचंद" के छल का भी तमाशा देखने की तकलीफ़ गवारा करें :—

लाई केलि-मंदिर तमासा को बताइ छल,
बाला शशि-रूपके कला पै किये धावा सी।
धाइ ताहि चहत गहन श्याम 'हरिचंद',
घूमि रही घर में चहूँघा करि कावा सी॥
धोखा दैके अंकन भरत अकुलानो अति,
चंचल चखन सों लखानी मृगछावा सी।
आहि करि सिसकि सिकोरि तन मोहि लियो,
कर तें छटक छूटी उचकि छलावा सी॥

और देखिये —

अरसौंहें नैना करि करि सौंहें मुसकात,
त्यों त्यों अकुलाति ज्यों ज्यों होत देखै प्रात री।
दोउन दुहून कर पीवत अधर रस,
चूमि चूमि चटकीले मुख जलजात री॥
भनत कवीन्द्र भरि भरि अंक ह्वै निशंक,
नेह भरे दोऊ फिर फिर बतरात री।
बिछुरन समय दुहू के गात लगि दोऊ,
लपटि लपटि जात नेकु न अघात री॥

× × × ×

गौने की राति सँवारि कै सेज सखीन बुलाइ लई दुलही।
निज प्रीतम सों जिमि केलि करी सिख दैकै चलीं रस रीति यही॥
तब लालन आय लई उर लाय गई अकुलाय उसास बही।
चौंकि परी परयंक तें बाल हहा करि सुन्दरि भूमि गही॥

सोवत है लड़िली दुलही पति संग बियाकुल ह्वै मुख मोरी।
झाँपि रही कुच चाँपि चुरीन बजे पग पायल कम्पित गोरी॥
सेज परी झझकै उचकै कटि किंकिणि शोर परो चहुँ ओरो।
हाहा करौं उत जागत है ननँदी बहियाँ न गहौ पिय मोरी॥

× × × ×

कामवती नायिका नवेली अलबेली खेलि,
नैहर ते प्रीतम के भौन गौन आई री।
रंग महल भीतर पलंग पर संग होत,
अंग अंग सों अनंग रंग सरसाई री।
लंक लचकाय परयंक मचकाय, भरि,
अंक हचकाय लपटाय छपटाई री।
पकरि पिया को चाह चौगुनी बढ़ाइबे को,
रति में करति आहि आहि अरी माई री॥

कितनी दर्दनाक तहरीर है! ऐसे बेदर्द शायरों को तो जितनी भी सख्त सज़ा दी जाय कम है। आगे देखिए —

आज मणि मंदिर मनोजमद चाखे दोऊ,
लगन लगालगी के मगन मजेज पर।
"द्विज देव" तैसिऐ दुहूँ के सुठि आनन की,
दूनी दुति ह्वै रही तमीपति के तेज पर॥
छल सों सम्हारि छोरि लालन छरा को बन्द,
पौढ़ि रहे पाणि धर कमल मलेज पर।
छूटे रति समर छपा को सुख लूटि दोऊ,
नीदे रति मदन उनींदे परे सेज पर॥

"द्विज देव" के छूटे रति समर को ज़रा समझने की ज़रूरत है।

और भी सुनिए :—

आतुर न हूजै नेकु चातुर चपल लाल,
जंघन विशाल पर जंघन जरे रहौ ।
नूपुर में जेहरी में नेकहूँ न लागै पाँव,
मेरे जू कपोल पै कपोल को धरे रहौ ॥
कंचुकी न छोरो अंग नैसुक न मोरो पिय,
"नन्दराम" कर को उरोज पै करे रहौ ।
जौ लौं घर जागति हैं ननँद जेठानी मेरी,
तौलौं कही मानो चुपचाप ही परे रहौ ॥

इससे भी ज्यादे खुलासा बयाने वस्ल ग्वाल कवि का है :—

आयो परदेश तें पियारो पढ़ि काम-मंत्र,
कैधौं यंत्र तंत्रन को पैन्हि आयो छल्ला है ।
कैधौं काहू देवता दियो है बरदान दैया,
खाई अकसीर कैधौं पारद इकल्ला है ॥
"ग्वाल" कवि करै कूदि कूदि केलि कौतुहल,
हल हल हलै पल पल में उछल्ला है ।
द्वै द्वै घड़ी दोय बेर चौ चौ घड़ी चार बेर,
फेर कियो नौ घड़ी को जन रेली हल्ला है ॥

लीजिए ग्वाल कवि ने यहाँ मोर्चए जंग क़ायम कर दिया । अब मैं हुजूरेआज़म का ज्यादे वक्त ख़राब न करके सिर्फ एक कवित हिंदी का और लिखकर इसके बाद दो-चार संस्किरत के

नमूने पेश करूँगा :—

प्रथम समागम न जानहि प्रसंग पीर,
गई केलि मंदिर उमंगन भरी रही ।
बिहँसि लगाय उर नीबी बंद छोरी लाल,
तौलौं न सकानी मुख जोरि कै अरी रही ॥
हाय कहि सिहरि उठी सुबाल रति माहिं,
छूटि न सकत बाहँ-बीच जकरी रही ।
ऊहि ऊहि आहि मरी रीरी सीसी सीसी करि,
दाबि ओंठ, मीचि आँख ढीली सी परी रही ॥

कितना ज़ालिमाना बयान है हुज़ूर ! उर्दू शायरों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठानेवालों का। परवरदिगार माफ़ फ़र्मावेंगे बर्बादिए वक्त के लिए. मैं ज़रा एक माशूक़ा की सख़्त परेशानी बवजह नादानिए आशिक़ और सुना देना चाहता हूँ :—

अल्हड़ बालम काह कहौं सखि जानत ना रस की बतियाँ ।
चूमि कपोल लयो अधरारस हारी सबै करिकै घतियाँ ॥
जंघन जाँघ दबाए रही उर लाए रही सिगरी रतियाँ ।
एतेहुँ पै समझ्यो न कछू रह्यो सोवत सीस धरे छतियाँ ॥

कितना क़ाबिले तरस बयान है कि सुननेवालों का कलेजा भी काँप जाता है । अब आप ज़रा संस्किरत के शायरों की भी बहार देखने की तकलीफ़ गवारा करें :—



अल्हड़ बालक काहू कहौं सखि……! (पृष्ठ १२२)

तस्याः किञ्चित्करधृतमिव प्राप्तवानीरशाखं।
नीत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधो नितम्बम् ॥
प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि।
ज्ञातस्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः ॥

(मेघदूत पूर्व; श्लोक ४५)

और देखिए —

सस्वजे प्रियमुरोनिपीडिनं प्रार्थितं मुखमनेन नाहरत्।
मेखलाप्रणयलोलतां गतं हस्तमस्य शिथिलं रुरोध सा ॥

(कुमार संभव; अष्टम सर्ग, श्लोक १४)

भावार्थः—हे मित्र! बेत के साथ लगे हुए (मानो हाथ से पकड़े हुए) और तट रूपी कमर से हटे हुए उस-नदी का जल-रूपी वस्त्र लेकर; लटके हुए आपकी यात्रा, वहां से कठिनता से होगी, क्योंकि रति के स्वाद को जाननेवाला ऐसा कौन पुरुष होगा, जो खुली हुई जङ्घाओं वाली स्त्री को देख कर छोड़ सके।

(मेघदूत पूर्व; श्लोक ४५)

भावार्थ —कुच-मर्दन की इच्छा से प्रेयसी प्रीतम से लिपट गई। प्रार्थना किए जाने पर अपने मुँह को नहीं मोड़ती अर्थात चुम्बन प्रस्ताव को अस्वीकृत नहीं करती। स्नेह से चंचल जो करधनी थी जब उस पर हाथ लगाया गया तो इच्छा होते हुए भी अनिच्छा दिखलाती हुई, उहूँ-उहूँ कहती हुई प्रीतम के हाथ को उसने धीरे से हटा दिया।

(कुमार सभव; अष्टम सर्ग, श्लोक १४)

ऊरुमूलनखमार्गराजिभिस्तत्क्षणं हृतविलोचनो हरः।
वाससः प्राशिथिलस्य संयमं कुर्वतीं प्रियतमामवारयत्॥

(कुमार संभव; अष्टम सर्ग, श्लोक ८७)

आलम पनाह ! ये संस्किरत के उस शायरे आज़म "कालोदास" के कलाम हैं, जिसके लिए —

मैली-कुचैली हिन्दी को झाड़-पोंछ कर साफ़-सुथरी करके क़ाबिले दीद बनाने वाले जनाब पंडत महावीरप्रसाद दुबेदी ने अपनी किताब बनाम 'कालिदास और उनकी कविता' में लिखा है, "वे अकेले भारत ही के कवि नहीं; उन्हें इस भूमण्डल का महाकवि कहना चाहिए।

"··· कवि-कुल-गुरु की कविता में प्रोमोत्पादन की जो शक्ति है, वह अविनाशिनी है। ··· जब तक इस विशाल विश्व के साक्षर जन सच्ची और सरस, स्वाभाविक और सुन्दर, कविता का आदर करते रहेंगे, तब तक कालिदास के विषय में उनकी पूज्य बुद्धि भी अक्षुण्ण्य रहेगी। ··· कालिदास को संस्कृत-कविता-रूपी आकाश का पूर्ण चन्द्रमा कहना चाहिए। ··· उनकी कल्पनाओं की पहुँच पृथ्वी, आकाश, पाताल सब कहीं थी।"

भावार्थ — जंघाओं के ऊपरी भाग तक पड़े हुए नख-चिन्हों को देखने में प्रीतम की आँखें संलग्न थीं, अस्तु प्रातःकाल प्रेयसी को वस्त्र पहनने से उसने रोका। अर्थात् प्रेमी का मन प्रेयसी की जंघाओं पर रति-समय के नख-क्षत देखकर पुनः प्रेम-क्रीड़ा में संलग्न होने का अनुभव करता है; अर्थात् यदि वे नख-क्षत वस्त्र द्वारा तिरोहित हो जायेंगे तो उसकी प्रेम-क्रीड़ा का अंत हो जाएगा।

(कुमार संभव; अष्टम सर्ग, श्लोक ८७)

उसी सिलसिले में ज़रा दूर चलकर दुबेदी जी ने लिखा है, "कवि यदि अपने मन का भाव ऐसे शब्दों में कहे, जिनका मतलब सुनने के साथ ही, सुनने वाले की समझ में आजाय; तो ऐसा काव्य प्रसाद-गुण से पूर्ण कहा जाता है ..... प्यार की बात यदि कहते ही समझ में न आगई— कारुणिक सन्देश यदि कानों की राह से तत्काल ही हृदय में न घुस गया, तो उसे एक प्रकार निष्फल ही समझिए। प्रेमालाप के समय कोई कोष लेकर नहीं बैठता।"

आलमपनाह गौर फ़र्मा हों! हमारे उर्दू शायरों ने तो बक़ौल "दुबेदी जी" अपनी शायरी में सीधे-सादे मोहावरेदार अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल शुरू कर दिया है, मगर हिन्दी के शुअरा अब तक न जाने क्या-क्या लिखते रहते हैं, जिसे या तो वे खुद समझें या उनका खुदा समझे! देखिए:—

मंजरित आम्र-वन छाया में, हम प्रिये मिले थे प्रथम बार।
ऊपर हरीतिमा नभ-गुंजित, नीचे चन्द्रातप घना स्फार॥
तुम मुग्धा थीं अति भाव-प्रवण।

और देखिये —

इन हीरक से तारों का, कर चूर बनाया प्याला।
....., प्राणों का आसव ढाला॥

हुज़ूर देखें कि ये हिंदी ज़बान है या कुछ और! तमाम खुराफ़ात बे सिलसिले और बेतरतीब एक ही जगह इकट्ठा कर दिया गया है।

उर्दू शायरों की तो ताक़त ही क्या है! हमारे शुअराए हिंदुई भी अब तक इसे नहीं समझ सके। मुझे उम्मीद है, आलमपनाह ने तो इसे ज़रूर समझ लिया होगा; न समझे हों

तो एक दूसरी चीज़ समझ लीजिए :—

शिला-खंड पर बैठी वह नीलांचल मृदु लहराता था;
मुक्त बन्ध संध्या-समीर सुन्दरी-संग
कुछ चुप-चुप बातें करता जाता और मुस्कराता था ;
विकसित असित सुवासित उड़ते उसके
कुंचित कच गोरे कपोल छू छू कर—
लिपट उरोजों से वे जाते थे,
थपकी एक मार बड़े प्यार से इठलाते थे।

ऐसे हिन्दी के तमाम छन्द हैं, जिनका मतलब समझाने के लिए ख़ुद शायर को जगह बजगह दौड़ धूप करनी पड़ती है। थोड़ी दूर चल कर "द्विवेदीजी" ने फिर उसी किताब में फ़र्माया है. "कवि को अविष्कर्ता या कल्पक नहीं समझना चाहिए। उसकी श्रृष्टि ही दूसरी है। वह निर्जीव को सजीव और सजीव को निर्जीव कर सकता है।"

कुछ दूर और आगे चलकर लिखते हैं, "कालिदास में एक बहुत बड़ी ख़ूबी है। दूसरों के मनोविकारों की तस्वीर उतारने में वे बड़े ही निपुण हैं।..... जिन बातों को और लोग नहीं देख सकते उनको भी महाकवि देख लेते हैं!..... जो बातें औरों को नहीं सूझतीं वे कवियों को ज़रूर सूझ जाती हैं। यही नहीं किन्तु वे उनका वर्णन भी कर सकते हैं। और ऐसा अच्छा कर सकते हैं कि हृदय पर वर्णित विषय की तस्वीर सी खींच देते हैं। जितने रस और जितने भाव हैं, सब मन के विकार हैं, और कुछ नहीं। इन विकारों के उत्कृष्ट शब्द-चित्र का ही नाम कविता है।"

ओ आई ऐम सॉरी* ! ख़ुदावन्द माफ़ फ़र्माएंगे ! मैं बहक कर न मालूम क्या कह गया। मुझे इन बातों से क्या मतलब ? अब मैं अपनी सफ़ाई के लिए संस्किरत का एक शेर और पेश करता हूँ, जिसके मुक़ाबले का शायद उर्दू के तमाम आशिक़ाना और माशूक़ाना अशआर को छान डालने पर भी एक शेर न निकलेगा। ज़रा सुनिए :—

एका च बाला तरुणी सुशीला,
महानिशायां प्रथमं प्रविश्ये ।
करोति शब्दं अरिरी मरीरी,
अरी मरीरी अरिरी मरीरी । ❀

हालाँ कि मैं तो इस शेर को बुरा नहीं कहना चाहता, क्योंकि यों तो आम मख़लूक़ात सभी बातों को देखता-सुनता और समझता है, लेकिन शायर की यही ख़ुसूसियत है कि वह किसी बात को देख-सुन कर एक दिलचस्प तरीक़े से क़लम बन्द कर दे, लेकिन अपनी सफ़ाई के सिलसिले में मैं मुद्दई से पूछना चाहता हूं कि इसमें कौन सी क़यामत बपा कर देने वाली बात आगई अगर उर्दू में भी इस क़िस्म के मज़मून के चंद अशआर पाए जाते हैं। इस शेर को पेश करने के बाद अब मैं ज़्यादे सफ़ाई देने की ज़रूरत महसूस नहीं करता; फिर भी मैं चंद अशआर और पेशे नज़र करता हूँ; ग़ौर फ़रमाइए। संस्किरत के एक बड़े शायर "भर्तृहरि जी" फ़र्माते हैं :—

---

* मुझे अफ़सोस है।

❀ भावार्थ :—एक सुशीला तरुणी बाला प्रथम रात्रि को केलि-मंदिर में प्रवेश करती है। (प्रथम समागम होने के कारण) उसके मुख से जो शब्द निकलते हैं वे श्लोक में स्पष्ट हैं।

शम्भुस्वयम्भुहरयो हरिणेक्षणानां,
येनाक्रियन्त सततं गृहकर्मदासाः।
वाचामगोचरचरित्रविचित्रिताय,
तस्मै नमो भगवते कुसुमायुधाय ॥१॥

मालती शिरसि जृम्भणोन्मुखी,
चन्दनं वपुषि कुङ्कुमान्वितम्।
वक्षसि प्रियतमा मनोहरा,
स्वर्ग एष परिशिष्ट आगतः ॥२४॥

प्राङ्मामेति मनागमानितगुणजाताभिलाषं ततः,
सव्रीडं तदनु स्खलथोद्यतमनुप्रध्वस्तधैर्यं पुनः।
प्रेमार्द्रं स्पृहणीयनिर्भररहः क्रीडाप्रगल्भा ततो,
निःशंङ्काङ्गविकर्षणादिकसुखं रम्यं कुलस्त्रीरतम् ॥२५॥

भावार्थ :— उस कामदेव को प्रणाम है; जिसके अद्भुत चरित्र को वर्णन करने के लिए वाणी शक्ति-हीन है, क्योंकि उसने ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश को मृगाक्षी बालाओं के वशीभूत करके गृह-दास सा बना दिया है ॥१॥

अध खिली मालती की माला से सुसज्जित, सुगंधित केसरिया चंदन लगाए हुए यदि कोई नव-बाला छाती से लिपटी हो तो समझ लीजिए स्वर्गानंद प्राप्त हो गया ॥२४॥

रति के लिए कुल-वधू ही श्रेष्ठ है। कारण—वह पहले नाहीं नाहीं करके इच्छा पूर्ती करती है, फिर लजाती हुई तन ढीला करके उतावली होती है और प्रशंसनीय प्रेम-क्रीड़ा प्रदर्शित करके निर्भय हो अंगों को समेट लेती है। इस प्रकार विशेष आनंद प्राप्त होता है ॥२५॥

उरसि निपतितानां स्रस्तधम्मिल्लकानां ।
मुकुलितनयनानां किंचिदुन्मीलितानाम् ॥
सुरतजनितखेदस्वार्द्रगण्डस्थलीनां -
मधरमधुवधूनां भाग्यवन्तः पिवन्ति ॥२६॥

हेमन्ते दधिदुग्धसर्पिरशना माञ्जिष्ठवासोभृतः ।
काश्मीरद्रवसान्द्रदिग्धवपुषः खिन्ना विचित्रै रतैः ॥
पीनोरःस्थलकामिनी जनकृता श्लेषा गृहाभ्यन्तरे ।
ताम्बूलीदलपूगपूरितमुखा धन्याः सुखं शेरते ॥४८॥

स्वपरप्रतारकोऽसौ निन्दतियोऽनीकपण्डितो युवतीः ।
यस्मात्तपसोऽपि फलं स्वर्गस्तस्यापि फलं तथाप्सरसः ॥५६॥
(शृङ्गार शतक)

भावार्थ—छाती पर पड़ी हुई, इत्र-सुवासित, सिर के बिखरे हुए बाल, अध खुली आँखें, तथा लहराते हुए बदनवाली कामिनी जिसके मुख-मंडल पर रति-श्रम के कारण आई हुई पसीने की बूँदें मोती के सदृश चमक रही हों, ऐसी सुन्दर स्त्री का अधरामृत भाग्यशाली पुरुष ही पान करते है ॥ २६ ॥

वे ही नर धन्य हैं, जो हेमन्त ऋतु में अपनी प्रिया के संग आनन्द से सोते हैं। दूध, दही और घी का भोजन करते हैं। अंग में केसर कस्तूरी, आदि लगाकर, अनेक आसनों द्वारा रति करके शिथिल पड़ी हुई पीन कुच, स्थूल जंघावाली, मजीठ के रंग में रँगे हुए वस्त्रों से सुशोभित तथा पान सुपारी से सुवासित मुख वाली स्त्री को छाती से लगाकर सोते हैं ॥ ४८ ॥

पंडित होकर स्त्रियों की निंदा करनेवाला मिथ्यावादी है। स्वयं तो ठगा हुआ है ही, औरों को भी ठगना चाहता है; क्योंकि तप का फल स्वर्ग और स्वर्ग-प्राप्ति का फल अप्सराओं का भोग है ॥५६॥

स्त्रीमुद्रां कुसमायुधस्य जननीं सर्वार्थसम्पत्करीं,
ये मूढ़ाः प्रविहाय यान्ति कुधियो मिथ्याफलान्वेषिणः।
ते तेनैव निहत्य निर्दयतरं नग्नीकृता मुण्डिताः,
कंचित्पंचशिखीकृताश्च जटिलाः कापालिकाश्चापरे ॥६२॥

क्या आलमपनाह इन तमाम हिंदी और संस्किरत के छन्दों को देखते हुए अब भी यह महसूस नहीं करते कि इनके बहरे सिंगार के सामने हमारे उर्दू के आशिक़ माशूक़ाना अशआर मिस्ले जू[1] भी नहीं मालूम पड़ते ?

अभी पूरी तहरीर खत्म भी नहीं होने पाई थी कि लक्ष्मी जी उल्लू पर सवार तेज़ी के साथ इजलास में दाख़िल हुईं। साथ में नारद जी भी थे। हर हाइनेस को देखते ही आलमपनाह ज़रा सिटपिटा-से गए; और झट रीडर[2] के हाथ से तहरीर लेकर लक्ष्मी जी की नज़र बचाते हुए लपेट-लपाट कर ड्राज़[3] में घुसेड़

भावार्थ—स्त्रियों के हाव-भाव (नाज़-नखरे), कामोद्दीपन तथा मनोकामनाओं के दाता हैं। (अर्थात् इन्हीं के कारण मनुष्य-मात्र सर्व सुख-सामग्री प्राप्त करने की चेष्टा करता और इन्हीं की प्रेरणा से असीम कठिनाइयों का सामना करके प्राप्त भी कर लेता है) जो मूर्ख स्वर्गादि की इच्छा से इनके प्रति उदासीन हो जाते हैं; उन्हें न तो त्यागी समझो और न उनके वेष को सच्चे विरक्त का वेष ही समझो। वास्तव में उन्हें निर्दय मनोज ने दण्ड देकर किसी को नंगा कर दिया, किसी का मूँड़ मुड़वा दिया, किसी को जटाधारी कर दिया तथा किसी को खप्पर देकर घर-घर भीख मँगवा रहा है।

१— मील। २— मुन्सिफ़ का मुंशी। ३—दराज़।

दिया। पता नहीं उन्हें ऐसा क्यों करना पड़ा! संभव है, इसका कारण हिंदी की पहिली कविता हो, जिसमें राधा के साथ श्याम सुशोभित हैं।

कमला ने कमला-पति के हाथ-पाँव फुला दिए। बज़ीरे आज़म ने आगे की पेशी देकर सबको रुख़सत किया। दिलावर का बयान आज भी नहीं हो सका।

पाँचवीं पेशी

पाँचवीं पेशी पर हमारे शुअराए हिंद और लेखक महोदय वकीलों के साथ पहुंचे तो बड़े चक्कर में थे। नाना वाहन, नाना वेषा; कहीं हंस बँधा था. कहीं भैंसा, कहीं नाँदिया, मूसक, सिंह और मयूर बँधे थे; उल्लुओं का समूह एक अस्तबल में अलग बँधा था। कहीं-कहीं घोड़े, हाथी और ऊँट भी थे। एक-दो जोड़ी सुसज्जित रथ भी दिखाई दे रहे थे; पर गरुड़ का कहीं पता न था। जिस इजलास में ये लोग आते ही बेधड़क अपने बाप का घर समझ कर घुस जाते थे, उसकी ड्योढ़ी पर एक मोटा-तगड़ा इन्सान फ़रसा लिए खड़ा था। पुकार के पहले अन्दर नहीं घुस सकते थे। बेचारे कुछ दूर पर जाकर एक पेड़ की छाया में पड़े हुए जान बचाते रहे। न वहाँ होटल, न हलवाई, न पानवाला जहाँ जाकर गले की ख़ुश्की मिटा सकें।

बमुताबिक़ ख़ुदाई घड़ियाल दस बजे के बैठे-बैठे तक़रीबन दो बजकर ढाई मिनट पर दर्बान ने हाँक लगाई— दिलावर देवी हाज़िर है?

पुकार सुनते ही दोनों वकील, मुद्दई, मुद्दालेह मय गवाहों के दौड़ पड़े। दर्बान ने डाटा, सिर्फ़ दिलावर की पुकार है। सबके सब फिर जाकर उसी पेड़ के नीचे पड़ रहे।

दिलावर ने अंदर जाकर देखा— आलमपनाह का पता नहीं है। लक्ष्मी जी गद्दीनशीन हैं। तमाम ओहदेदार अलग अलग अपने अपने काम में दत्त-चित्त हैं। पहले की-सी आज़ादी नज़र नहीं आती। सबके सब गंभीर.सहमे-से. डरे-से दिखाई पड़ते हैं। वज़ीरे आज़म बाक़ायदा अपनी जगह क़ायम हैं।

पहुँचते ही वज़ीरे आज़म ने दिलावर से सवाल किया— तुम्हारे ऊपर ख़ून का जुर्म लगाया गया है! तुम्हारी वजह से एक बेगुनाह ख़ुदकशी करके मर गया है।

दिलावर ने दिलावरी से जवाब दिया— मुझे तो इसका मुतलक़ इल्म नहीं है।

वज़ीरे आज़म — तुम्हें क्यों इल्म होगा? इसके लिए तुम्हारी ख़ूबसूरती जवाबदेह है।

दिलावर ने बेधड़क कहा— इसके लिए ब्रह्माजी गुनहगार हैं। उन्होंने मुझे ऐसी ख़ूबसूरती क्यों दी! जिसको देखते ही लोग ख़ुदकशी कर लें?

वज़ीरे आज़म लाजवाब थे। लक्ष्मी जी ने कड़क कर हुक्म दिया— ब्रह्माजी! इसकी बड़ी-बड़ी क़ातिल आँखें निकाल कर एक मझोली और एक छोटी लगा दो; चमड़े पर काला रंग पोत दो; पतली कमर मोटी कर दो।

सरकारी वकील ने दख़लन्दाज़ी की; हरहाइनेस एक बेगुनाह को सज़ा देकर ग़लती कर रही हैं। ख़ताबार तो

ख़ुदकुशी करनेवाला है। ख़ुदकुशी ख़ुद एक गुनाह है। देखिए ऐक्ट नं० सत्तावन खरब, बावन अरब, अड़तालिस करोड़, चौबीस हज़ार, नौ सौ, ग्यारह।

लक्ष्मी जी ने ग़ुस्से की निगाह फेंकी; वकील साहब चुप हो गए।

दर्बान ने हाँक लगाई—मुद्दई-लेखक, मुद्दालेह - शायराने हिन्द हाज़िर हैं?

मुद्दई-मुद्दालेह मय वकील के इजलास में दाख़िल हुए। गवाह बाहर रोक दिए गए। वकीलों ने दिलावर का फ़ैसला पढ़ा; ताड़ गए कि अब यहाँ ख़ुदाई खाता नहीं, अंधेर खाता है; अगर सम्हल कर न रहा गया, तो किसी वक्त अपने ही पर आ बनेगी।

वज़ीरे आज़म ने मुद्दई के वकील को अपना चश्मदीद गवाह तलब करने का हुक्म दिया। चश्मदीद गवाह हाज़िर हुआ।

सरकारी वकील ने खड़े होकर कहा—देखो यह अदालते कमला है। यहाँ बहुत सोच-समझ कर बोलना। झूठ बोलनेवाला यहाँ सख़्त सज़ा पाता है। जो कुछ देखा है वही कहना; उसके अलावा अगर कोई बात कहोगे, तो नए ऐक्ट नं० २ के मुताबिक़ झूठी गवाही देने के जुर्म में सज़ा के हक़दार होगे।

इतना कहकर वकील साहब बैठ गए। वज़ीरे आज़म ने गवाह से पूछा—तुम्हारा नाम क्या है?

गवाह चुप रहा।

वज़ीरे आज़म ने ज़रा ज़ोर से कहा— क्यों सुनते नहीं; तुम्हारा नाम क्या है?

गवाह अब भी चुप था।

वज़ीरे आज़म झल्ला उठे। बिगड़ कर बोले— मैं तुम्हारा नाम पूछ रहा हूँ।

गवाह इस तरह ख़ामोश खड़ा था; जैसे सूखा झाड़।

अबकी मुद्दई के वकील ने उसका हाथ झकझोर कर कहा— क्या बहरे हो? आलमपनाह तुम्हारा नाम पूछ रहे हैं!

अब गवाह वकील साहब के ऊपर बिगड़ कर बोला—क्या आप मुझे ऐक्ट नं० २ के मुताबिक़ फँसाना चाहते हैं? जब मैंने अपना नाम देखा ही नहीं, तो कैसे बता दूँ!

यह उत्तर सुनते ही हरहाइनेस का चेहरा ग़ुस्से से लाल हो गया। वज़ीरे आज़म ने कड़ी आँखों से देखते हुए गवाह को डाटा बदतमीज़, गुस्ताख़ कहीं का! यह अदालत लक्ष्मी है; दर्बारे अकबर नहीं! यहाँ बीरबल के चुटकुले छोड़ने आया है?

हरहाइनेस ने तड़पकर कहा—"कतहुँ सिधाइउ ते बड़ दोषू" हिज़हाइनेस की सीधाई से एक यही क्या! सारा हिंदुस्तान ज़रूरत से ज़्यादे गुस्ताख़ हो गया है। मैं अभी इनकी दवा किए देती हूँ।

इन्द्र नारायण!

इन्द्र नारायण सम्मुख उपस्थित हुए।

हुक्म मिला—आज से हिंदुस्थान में ठीक समय से पानी बरसाना बन्द कर दो। सारी खाद्य सामग्री अपने क़ब्ज़े में कर लो। मरने दो भूखों इन नालायक़ों को!

इन्द्र नारायण, "जो आज्ञा" कहकर अपने स्थान पर बैठ गए।

सरकारी वकील से फिर न रहा गया। उसने बहुत ही नम्र होकर कहा — हरहाइनेस यह क्या कर रही हैं! ख़तावार एक

शख्श है. सज़ा आप तमाम ख़िलक़त को दे रही हैं। आप क्या नहीं जानतीं कि आलमपनाह को हिंदुस्तान से कितनी मोहब्बत है ? मैं समझता हूँ कि दफ़ा नम्बर ....

सरकारी वकील पूरा वाक्य बोलने भी न पाया था कि लक्ष्मी जी ने बिगड़ कर कहा – चुप रहो, जब देखो दफ़ा दफ़ा लगाए रहते हो ! एक मर्तबा कह दिया, मेरे सामने दफ़ा-वफ़ा की कोई ज़रूरत नहीं है। तुम क्यों बार बार मेरे आड़े आया करते हो ! आलम-पनाह की मोहब्बत ने ही सब चौपट कर रक्खा है। तुम्हें अभी हिन्दुस्तानियों के कारनामे नहीं मालूम। इन लोगों ने आलम-पनाह के बारे में क्या क्या लिखा है ? जिस वक्त आलमपनाह देखेंगे उनकी आँखें खुल जायँगी। मैंने "ध्वनि आकर्षण-यंत्र" से सब कुछ पता लगा लिया है। मैं तो अब इन्हें तबाह करके ही छोड़ूँगी। वज़ीरे आज़म ! इस कलूटे के बयान नोट करके यहाँ से इसका मुँह काला करो। अगर सीधे न बताए तो जल्लाद को बुलाकर उल्टा टँगवा दो।

बेचारा गवाह थर-थर काँप रहा था। जल्दी से कुछ काग़ज़ वज़ीरे आज़म के हाथ में देता हुआ बोला — मैंने जो कुछ देखा या सुना है, मेरी इस तहरीर बनाम मैयते-आशिक़ में दर्ज है।

वज़ीरे आज़म ने तहरीर लेकर रीडर को देते हुए पढ़ने का हुक्म दिया। हस्बज़ैल तहरीर पढ़ी गई :—

मैयते-आशिक़

मर मिटा कोई किसी के इश्क़ में।
मरनेवाले की क़दर फिर भी न की कुछ यार ने॥

चूँकि मरने के बाद वह कह रहा था :—

सुना है जी उठे आशिक़ अगर माशूक़ काँधा दे।
पशोपेश है उन्हें मेरे जनाज़े के उठाने में॥

उन्हें अगर आशिक़ को ज़िन्दा रखने का शौक़ होता तो, क्या ज़रा सा काँधा देकर ज़िन्दा न कर लेतीं? इसी का तो उन्हें पशोपेश था कि कहीं काँधा लगाया और जनाब कफ़न-वफ़न फाड़ कर उठ बैठे तो गई बला फिर गले लगेगी। लेकिन आशिक़ का दिल इतनी बेरुख़ी पर भी माशूक़ा की तरफ़ से नहीं फिरा था, क्योंकि जिस वक्त माशूक़ा ने मातम ज़ाहिर करने के लिए अपने बाल खोले, उस वक्त सब ने सुना वह कह रहा था—

घुमा के हाथ क़ातिल ने जो खोले बाल आहिस्ता।
घटा शर्मा के यूं बोली अदा को उनकी क्या कहना॥

उसे अपने मरने पर भी तरस न आया और जाते-जाते उसकी अदा पर लट्टू होता रहा। माशूक़ा ने बकरम उसके जनाज़े को अपने ही हाथों से सजाया। इस ज़रासी मेहरबानी को भी वह कम नहीं समझा, बल्कि जनाज़ा उठते ही अज़हद खुश होकर बोला—

फ़ना के बाद पहनाया गया ख़ूनी कफ़न बिस्मिल।
उठी इस रंग से मैयत कि सब समझे बहार आई॥

और खुशी होती भी क्यों न! जबकि वह उन्हीं के हसरते दीदार

में मरा था; क्योंकि मरने के पहले एक रोज़ मुझ से कह रहा था—

ज़रा हमराह[1] चलते लाश उठाते फ़ातिहा[2] पढ़ते।
शबे फ़ुर्क़त अगर तक़दीर से मैं आज मर जाता॥

और मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि उसने इसी शौक़ में ज़हर खाकर जान दी होगी; क्योंकि एक रोज़ वह ज़हर खाने का इरादा करके ज़रा हिचक गया था और मुझ से कह रहा था—

फ़िराक़े यार में इस डर से ज़हर खा न सके।
यही कहेगा ज़माना कि नाज़ उठा न सके॥

मुझे आलमपनाह! उस वक्त रोना आ गया, जब चलते-चलते वह कहने लगा—

मर गया हूँ मैं किसी की हसरते दीदार में।
क़ब्र तक लाशा हमारा राह तकता जायगा॥

मेरा दिल भर आया; मेरी तबीयत न मानी; आधे रास्ते से लौटकर उसकी माशूक़ा से जाकर कहा कि थोड़ी दूर तक तुम साथ चली चलो; इससे उस मरहूम की रूह को तसल्ली नसीब होगी, लेकिन वहाँ कौन सुनता था? उन्होंने मुझे कुत्ते-सा दुतकार दिया; मैं अपनी-सी सूरत लेकर वापिस आगया और सर की तरफ़ काँधा लगाकर धीरे से सब हाल कह दिया। उसने सुनकर एक लम्बी आह के साथ कहा—

अगर हमराह मैयत दो क़दम वह साथ आ जाता।
शहीदे नाज़ क़ातिल को दुआ देता चला जाता॥

१—साथ। २—मरने के बाद की नमाज़।

मैंने हमदर्दी ज़ाहिर की—

न रो ऐ चश्मतर आशिक़ तसल्ली कर फ़सेमुर्दन[१]।
न अब तुझ को मिलेंगे वो कहीं तू है कहीं वो हैं॥

इतना सुनकर वह धीरे-धीरे बड़बड़ाया—

बड़ी मुश्किल से था मैंने तमन्ना का चमन बोया।
बड़ी दुश्वारियों[२] से ये चमने उम्मीद सींचा था॥
ख़िज़ां वारिद[३] हुई जब फूलने फलने का वक्त आया।
बिगड़ जाने की सूरत सैकड़ों थीं और मैं तनहा[४]॥

फिर मुझ से बोला—

मेरे हमदर्द तुम कहना बुते बेपीर से जाकर।
मेरी तुरबत पे दो ठोकर कभी आकर लगा जाये॥

हुज़ूरे आज़म! मैं उस वक्त अपने को न सम्हाल सका; बड़े ज़ोर से रो पड़ा; दिल में इतने ज़ोर का धक्का लगा कि जनाज़ा मेरे हाथ से छूट गया। मैं ग़श खाकर गिरने ही वाला था कि एक दोस्त ने दौड़ कर मुझे पकड़ लिया और एक ने दौड़ कर जनाज़ा सम्हाला। मुझे बेहोशी की हालत में वहीं से वापस लौटाल दिया गया। दो-चार दिन बाद मेरी तबीयत सम्हली; मैंने जाकर माशूक़ा को उसका सँदेसा सुनाया; उन्हें कुछ रहम आ गया; लेकिन मुझ से कहने लगीं—चलकर मुझे उसकी तुरबत बतला दो। हम दोनों साथ गये; पहुँचते ही क़ब्र के अन्दर से

१—मरने के बाद। २—कठिनाइयों। ३—आई। ४—अकेला।

आवाज़ आई—

किए सिंगार फिर निकले चमन की सैर करने को।
हुआ है हुस्न बेपरदा इलाही वाह क्या कहना॥

मुझे उस वक्त बड़ा ताज्जुब इस बात का हुआ कि उसे इतनी जल्दी कैसे मालूम हो गया कि उसकी माशूक़ा यहाँ आई है? मुझ से न रहा गया; मैंने उसके सर की तरफ़ कान लगाकर धीरे-से कहा—जनाब को कैसे मालूम हुआ कि हुज़ूर की माशूक़ा ने क़दमरंज[1] फ़र्माया है?

जवाब मिला—

किसी के पाँव की आवाज़ से मैं यह समझता हूँ।
मेरी तुरबत पे होकर के कोई अक्सर गुज़रता है॥

क्यों न हो! आख़िर जानवर भी अपने मालिक की चाल पहचानते हैं; फिर यह तो रूहे आशिक़ थी!

मुझे इनकी ज़बानी मालूम हुआ कि माशूक़ा का यहाँ पहले से आना-जाना जारी है; तुरबत न मालूम होने का मुझ से झूठा बहाना था; क्योंकि आशिक़ ने मुझ से पूछा—

जीते जी तो रक्खा था फ़ुर्क़त के अँधेरे में।
क्यों आज दिया मेरी तुरबत पे वो धरते हैं॥

अगर आज से पहले माशूक़ा इनके मज़ार पर चिराग़ जलाने न आई होती, तो वह मुझ से ऐसा क्यों कहता? मैंने सच बात कह दी—

ऐ इश्क़ के परवाने इस कूचए क़ातिल में।
रहमत की नज़र मिलती है बादे फ़ना सब को॥

१—पदार्पण करना, आना।

मैं इतना कहकर वहाँ से चलने ही वाला था कि उसने कहा, "ज़रा एक बात कान में सुनो।" मैंने तुरबत से कान सटा दिया। आवाज़ आई—तुम कोई ऐसी तरकीब करो जिससे मेरे एक दोस्त नजूमी[1] की बात सच हो जाय। उसने मुझ से मेरी ज़िंदगी में कहा था—

पसे मुर्दन बनाए जायँगे सागर तेरी गिल[2] के।
लबे जानाँ के बोसे ख़ूब लेगा ख़ाक में मिलके॥

मैंने उन्हें विश्वास दिलाते हुए कहा—मैं आज ही जाकर किसी कुम्हार से कहे देता हूँ; वह तुम्हारी क़ब्र की मिट्टी ले जाकर प्याला बना देगा और मैं उससे प्याला लेकर तुम्हारी माशूक़ा के पास पहुँचा दूँगा; बल्कि एक-दो जाम उसी में अपने सामने पिला भी दूँगा, ताकि तुम्हें अपने सामने ही लबे जानाँ के बोसे नसीब होते देखूँ; लेकिन क्या कहूँ उसकी बद क़िस्मती को? मैंने कुम्हार से कहा; वह बेचारा जाकर उनकी क़ब्र की मिट्टी खोदने लगा; इतने में कुछ सरकारी कारिंदे पहुँच कर मुर्दा खोदने के जुर्म में उसे पकड़ ले गए। वह बेचारा लाख फटफटाता रहा इस बिने[3] पर कि मैं बहुक्मे मरहूम ऐसा कर रहा हूँ और उसी के फ़ायदे के लिए; मगर उसकी एक न सुनी गई; ग़रीब को गुनाह बेलज्ज़त में जेल की हवा खानी पड़ी। तब से मारे डर के मैं भी उधर नहीं गया।

तहरीर ख़त्म होते ही लक्ष्मी जी फिर बिगड़ीं—मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि उसने इसी नजूमी की बातों में आकर ख़ुदकुशी कर ली। नारद जी! आप कल सुबह यहाँ से हिंदुस्तान के लिए रवाना हो जाइये और तमाम आमो ख़ास के कान फूँक दीजिए कि आयन्दः कोई भी इन मक्कार नजूमियों की बातों

१—ज्योतिषी। २—मिट्टी। ३—बुनियाद, आधार।

में न आए अगर पैदल न जा सकें तो मेरा एक उल्लू अपनी सवारी के लिए ले जाइए। अस्वाभाविक गंभीर मुद्रा बनाकर नारद जी ने कहा—नहीं मेरा पैदल जाना ही उचित होगा; फिर आपको उस सवारी से वंचित करना किसी को वांच्छनीय नहीं; मैं ही क्यों यह पाप लादूँ? मुझे तो पैदल चलने का अभ्यास है! फिर मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ कि उस वाहन पर सवार हो सकूँ?

लक्ष्मी जी ने वज़ीरेआज़म को मुख़ातिब करके हुक्म दिया—कल सवेरे मैं ख़ुद तुरबते आशिक़ पर चल कर उसका बयान लूँगी; और देखूँगी कि असल माजरा क्या है? तुम सब लोग तैयार रहना; मुद्दई-मुदालेह की पेशी भी कल वहीं रक्खो; आज अब कचेहरी बर्ख़ास्त करो।

खुदा के घर में—

त्रिभुवन पति! बड़ी विषम समस्या उपस्थित हो गई। श्रीमान् ने हरहाईनेस के चक्कर में आकर बिना सोचे-विचारे उनके अधिकार-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिया। हम लोगों के ऊपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। रातो-दिन डाट-फटकार और अपमान जनक बातें सुनने को मिलती हैं। हम लोगों की सारी प्रतिष्ठा धूल में मिल गई। उल्टी-सीधी जैसी भी आज्ञा उनके मुखारविन्द से निकल जाय; उसी के अनुसार बिना कान-पूँछ हिलाए कार्य-वाही कर देनी पड़ती है। उनकी आज्ञा के आगे किसी की कोइ मंत्रणा काम नहीं देती। ऐसा श्रीमान् के समय में कभी नहीं हुआ जैसा अब हो रहा है। सब को हर समय न्यायालय

में उपस्थित रहना पड़ता है। न्यायालय के समय तक कोई कहीं जा नहीं सकता। उसके अतिरिक्त जो समय मिले, उसमें फिर अन्य कार्य किए जायँ। ऐसी दशा में मेरे कार्यालय का काम तो बिल्कुल चौपट हुआ जा रहा है। देखिए, भारतवर्ष से कितने दुःखद पत्र आए हैं—किसी के गर्भ में दस-दस बारह-बारह मास तक बालक पड़ा रह गया; किसी-किसी के पेट में बालक को सात-आठ मास तक भी रहने का धैर्य न हुआ; कोई-कोई तो तीसरे ही चौथे मास में संसार-यात्रा के लिए उत्सुक हो पड़े; कोई-कोई ठीक स्थान पर न होने के कारण प्रथम मास में ही विनष्ट हो गए। यह सब मेरे कार्यालय की अव्यवस्थिता है; और उसका मुख्य कारण है समय का अभाव। अब देखिए, भुवन-भास्कर को आज्ञा हुई है कि वे नित्य एक घंटा न्यायालय में आकर अपना समय दिया करें। विचार कीजिये, उनका न्यायालय में क्या काम है? व्यर्थ उनका एक घंटा नष्ट हो जाता है, और वे संसार में विलंब से पहुँचते हैं; जिसके परिणाम स्वरूप मानव-जाति को अपने समय-दर्शक की सुइयाँ साठ मिनट आगे कर देनी पड़ीं। मेरे भेजे हुए जीव वहाँ एक घंटा देर से पहुँचने लगे; चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण में भी एक-एक घंटे का अन्तर पड़ने लगा। ऐसे अन्धेर खाते में हम लोग कब तक काम कर सकेंगे?

मुझे क्या मालूम था ब्रह्माजी! कि मेरे परम भक्त नारद जी भी मेरे साथ धोखा करेंगे? मैं तो बिना इक़रारनामे को पढ़े हरगिज़ हस्ताक्षर न करता, किन्तु नारद जी के कहने में आगया। अब तो वचन-बद्ध हो ही चुका हूँ; किसी प्रकार निभाते जाइए।

इतने में वज़ीरेआज़म घबराए से आकर कहने लगे—आलमपनाह! बड़ा ग़ज़ब हो रहा है; बिल्कुल बेक़ुसूर लोग

मारे जा रहे हैं; मुक़द्दमा कुछ है, फ़ैसला कुछ होता है; दावा किसी और पर है, सज़ावार कोई दूसरा ठहराया जाता है; तुर्रा यह कि बहस मुबाहसे की या समझने समझाने की कोई गुंजायश नहीं; हुक्म हुआ कि उसकी उसी वक्त तामील होना। ऐसी हालत में हम लोगों की वहाँ कोई अक़्ल काम नहीं करती। आज मुद्दालेह की सफ़ाई वाले काग़ज़ात, जो आप के पास हैं, उसी के लिए मैं दिन भर अपनी ख़ैरियत मनाते मनाते मर गया। मुझे डर था कि अगर उस मसले पर बहस छिड़ी और वे काग़ज़ात न मिले तो मेरे ही ऊपर सारी आफत न आ जाय। वह तो आप की दुआ से आज उसके लिए वक्त ही नसीब नहीं हुआ। ऐसा कीजिये कि उसमें से एक-दो आख़ीर वाल काग़ज़ मुझे दे दीजिए उसी के साथ मैं मुद्दालेह का बयान तहरीर कर दूँगा। नीचे मुद्दालेह के दस्तख़त मौजूद हैं ही; और आख़ीरवाले काग़ज़ों में आपके ख़िलाफ़ कोई बात भी नहीं है।

आलमपनाह ने कुछ देर तक सोच-विचार करने के बाद वज़ीरेआज़म को काग़ज़ात दे दिए। उन काग़ज़ों को पाकेट[1] के हवाले करते हुए वज़ीरेआज़म ने कहा—बस अब मैं सब ठीक कर लूँगा। आज अब मुझे इजाज़त दीजिए, क्योंकि कल अलस्सुबह[2] तुरबते आशिक़ की तरफ़ कूच करने की तैयारी करना है।

ब्रह्मा जी को भी अपनी तैयारी की याद आगई; अस्तु प्रणाम करके विदा हुए।

१—जेब। २—बड़े तड़के।

तुरबते आशिक़ पर

दूसरे दिन सबेरे लक्ष्मी जी ने अपने मुसाहबों के साथ हिन्दुस्तान के लिए कूच किया। नारदजी पौ फटने के पहले ही कमला की आज्ञानुसार पयान कर चुके थे।

जिस वक्त लक्ष्मी जी की सवारी हिन्दुस्तान की सरहद पर पहुँची, लोग उल्लू, चूहा, मोर, सिंह, स्यार, कुत्ता भैंसा, बैल आदि की सवारियाँ देख-देखकर बड़े चकित हो रहे थे। बहुत से तमाशाई तो तुरबत तक साथ लगे चले गए। तुरबत के चारों ओर कचेहरी क़ायम हो गई। लेखक के वकील ने सिरहाने की तरफ़ जाकर आशिक़ से कहा—अदालते आज़म को आप अपना बयान लिखा दीजिए; जो कुछ पूछा जाय, उसका जवाब देने की तकलीफ़ गवारा कीजिए; लेकिन वहाँ सिवाय सन्नाटे के कोई आवाज़ न थी। शुअराएहिंद भी तरह-तरह के चुनिंदा शेरों के मंत्रों स तुरबते आशिक़ को झाड़ कर परेशान हो गये; मगर आशिक़ में जान पैदा न हुई। सभी लोगों ने नई-नई तरकीबें लड़ाईं। तुरबत में सिरहाने की तरफ़ एक लम्बा सूराख़ बनाया गया कि शायद आवाज़ आने में दिक़्क़त होती हो; मगर सब बेसूद साबित हुआ।

यकायक एक नौजवान जानानएहिंद भीड़ में से निकलकर मज़ार के नज़दीक़ जा पहुँची। उसने सुरीले स्वर से कहा—

न जाना आज तक हमने कि राज़े इश्क़ क्या शै[1] है।
कहानी हम न समझे आज तक हसरत भरे दिल की॥

× × × ×

ज़ब्त गो दिल ने किया लेकिन न आहें रुक सकीं।
दर्द दिल ने उठके शरमिंदा किया दिल से मुझे॥

१—चीज़, बला।

सब लोग मंत्रमुग्ध-से होकर कभी तुरबत को चारों तरफ़ से देखते थे; कभी माशूक़ा का मुँह ताकते थे। ब्रह्मा जी ने ग़ौर से माशूक़ा को देखा तो ताड़ गए कि यह और कोई नहीं वही दिलावर है, जिसकी उन्होंने बहुक्मे लक्ष्मी हुलिया बिगाड़ दी थी, लेकिन यह तो पहले से भी ज्यादे ख़ूबसूरत दिखाई दे रही है। ब्रह्मा जी तो इसका कारण लाख सर मारने पर भी नहीं जान सकते, लेकिन मैं अहले महफ़िल को बतला देना चाहता हूँ कि दिलावर ने अपनी आँख का ऐब छिपाने के लिए चश्मा लगा लिया था। काले रंग को सफ़ेद पाउडर से गोरा कर लिया था और बड़े-बड़े बाल जिन्हें ब्रह्मा जी ने बेतुके ढंग से काट कर छोटे कर दिए थे, उन्हें उसने हिंदुस्थान में आकर उम्दा घूँघरवाले बाल करवा लिए थे। रह-रह कर क़ब्र से आवाज़ आती जाती थी :—

१

हम ग़रीबों से मिलो या न मिलो शाद रहो।
तुम सलामत रहो जीते रहो आबाद रहो॥

× × × ×

कभी ये हज़रते दिल चैन से नहीं बैठे।
हमारा काम न जब तक तमाम कर डाला॥

× × × ×

अरमान न होता व न उम्मीद ही होती।
पहलू में अगर दिल न ख़ुदा ने दिया होता॥

× × × ×

उनकी गली से जिस दम निकला मेरा जनाज़ा।
हसरत से देखते थे परदा उठा उठा कर॥

× × × ×

चमक जुगनू की बर्क़[2] बेअमाँ[3] मालूम होती है।
क़फ़स में रह के क़द्रे आशियाँ मालूम होती है॥

१—प्रसन्न, सुखी। २—बिजली। ३—बेपनाह।

ग़म तो इसका है कि दिल ने मेरी ग़मख़्वारी न की।
दुश्मनों से क्या गिला[1] जब यार ने यारी न की॥

× × × ×[2]

मदहोश जवानी की रातों में क्या क्या बादानोशी थी।
ज़र्रा ज़र्रा साग़िर था मैं और मेरी बदहोशी थी॥

× ×[3] × ×

इश्क़ का मनसब लिखा जिस दिन मेरी तक़दीर में।
आह की नगदी मिली सहरा मिला जागीर में॥

×[4] ×[5] × × ×

इशरते क़तरा है दरिया में फ़ना हो जाना।
दर्द का हद से गुज़रना है दवा हो जाना॥

× ×[6] × × ×

कहानी मेरी रूदादे जहाँ[7] मालूम होती है।
जो सुनता है उसी की दास्ताँ मालूम होती है॥

दिलावर से अब बर्दाश्त न हो सका। उसका गला भर आया, उसने हिचकियाँ लेते हुए कहा—

बस हो चुकी हमारे चमन की बहार बस।
अब और हम हैं गरदिशे लैलो निहार बस॥
खाई है तुमने चोट अगरचे बहुत कड़ी।
है दिल की बात दिलही में रहने भी दो पड़ी॥
थोड़ी है रात और कहानी बहुत बड़ी।
'हाली' निकल सकेंगे न दिल के बुख़ार बस॥

बस हो चुकी .....

१—शिकायत। २—मद्यपान। ३—अधिकार-पत्र। ४—ख़ुशी। ५—बुलबुला। ६—समाचार, ख़बर। ७—कहानी।

बोलो, ज़बान खोलो मेरी जाँ ! ख़ामोश क्यों हो ? क़ब्र से जब तुम्हारी आवाज़ सुन लूँ, पहचान लूँ, तभी तो समझूँ कि तुमने मेरे ग़म में दम तोड़ा है।

जो लोग तुरबत के नज़दीक बैठे थे, उन्होंने सुना; बहुत ही धीमी-सी, कराहती हुई आवाज़ आई—

मेरी ख़ाक भी लहद में न रही अमीर बाक़ी।
उन्हें मरने ही का अब तक नहीं एतबार होता॥

माशूक़ा ने फिर कहा—

हाले दिल कुछ तो कहो किसने सताया है तुम्हें।
क्या कोई ग़म है जो जीने से ख़फ़ा होते हो॥

धीमी-सी आवाज़ अनक़रीब बैठे हुए हाज़रीन के कानों में आई—

पड़ा हूँ सूरते[२] नक़्शे[३] क़दम न छेड़ मुझे।
मैं और ख़ाक में मिल जाऊँगा उठाने से॥

माशूक़ा ने धीरे से कहा—दे वो, इस वक़्त ऐसी बातों का मौक़ा नहीं है—

जिन्होंने आज बिगाड़ी है ये तस्वीर तेरी।
तेरे इजलास में हाज़िर हैं वो रक़ीब सभी॥

× × × ×

हरदम यही हुआ है ख़ुदा की जनाब में।
मर जाय जो आशिक़ तो बिगाड़े बुतों की शान॥

बस फिर क्या था! तुरबत हिल उठी। आशिक़ में जान आगई। लोगों के कानों में सदा आई—

तुम्हीं दमे नज़ा बालीं पे आके बोले थे।
कि किसके इश्क़ में दुनियाँ से जुदा होते हो॥

१—क़ब्र। २—तरह। ३—चिन्ह।

ख़ैर. ज़िन्दगी में जो किया सो ठीक ही था, लेकिन अब तो —

मेरे मज़ार[1] पै लिल्लाह[2] दो घड़ी बैठो।
बहुत दिनों में तुम आए हो इस गली की तरफ़॥

माशूक़ा ने कलेजे पर हाथ रखकर कहा—आह, आज जाकर तुम्हें पहचाना! अपनी ग़लतियों, ग़लतफ़हमियों पर मुझे नदामत और पशेमानी है। मैंने किस-किस तरह की चोटें, कैसे-कैसे वार इस नन्हीं सी जान पर, इस नाज़ुक से दिलपर किए हैं! तेज़ ख़ंजर, तीरो तबर क्या क्या नहीं थे पास में? सच कहो, क्या आज भी वे चोटें, वे घाव तुम्हारे जिगर में तरोताज़ा हैं?

मरहूम आशिक़ की तरफ़ से एक लम्बी साँस के साथ जवाब मिला—

ख़ंजर को चूस चूस के कहते हैं मेरे ज़ख़्म।
ज़ालिम मज़े भरे हुए तुझ में कहाँ के हैं॥

यह सुनते ही माशूक़ा के चेहरे पर एक मुस्कान दौड़ गई और बरबस मुँह से निकल पड़ा—

मुझसे घबरा के वो कहते थे कि मर जाएँगे।
मर के भी चैन न पाया तो किधर जाएगे॥

लोग चकित होकर तुरबत की ओर देखने लगे। ताड़ने वाले ताड़ गए कि हो न हो, यही मरहूम की माशूक़ा है। तुरबत से फिर आवाज़ आई:—

मत मिलो लेकिन करमफ़रमाँ[3] रहो।
ख़ुश रहो जीते रहो जिस जाँ रहो॥

१—समाधि, कब्र। २—ईश्वर के लिए। ३—दयालु।

ब्रह्माजी ने कुछ रुष्ट होकर कहा — यह मेरा काम नहीं है; यह तो यमराज का काम है, उनसे पूछना चाहिए कि वे कैसी असावधानी से जान निकालते हैं ?

यमराज जी सिटपिटाए-से आगे बढ़कर बोल उठे— क्या बताऊँ ! मैं तो इन आशिक़ों से आजिज़ आगया। पहले तो ये चार-चार घंटे मिलने ही नहीं ; कभी मिलते हैं, तो ऐसा मालूम होता है कि पहले ही रवाना हो चुके हैं, और कभी-कभी इतनी जल्द-बाज़ी से काम लेते हैं कि वक्त के पहले ही क़ब्र में पहुंच जाते हैं ; इसी गड़बड़ी में इनकी जान ठीक से नहीं निकलने पाती। दूसरे विश्व व्यापी युद्ध के कारण आजकल मेरा काम इतना अधिक बढ़ गया है कि मैं सम्हाल नहीं पाता। एक मेरी जान और लाखों मरने वाले, मैं अकेला कहाँ कहाँ देखूँ ! आशिक़ाने हिंद तो सर से कफ़न लपेटे घूमा ही करते थे, इधर युद्ध के नए-नए रंगरूट भी हथेली पर जान लिए घूमने लगे हैं। मैं तो सख़्त परेशान हूँ।

ब्रह्माजी ने शिकायत की—यही कारण है कि आजकल मनुष्यों की आत्माएँ बड़ी जल्दी-जल्दी लौटने लगी हैं। ये अधूड़ी-सधूड़ी जानें ला-लाकर दे देते हैं,और मैं उन्हीं को शरीर में प्रविष्ट कर देता हूँ; वे अधूड़ी आत्माएँ कोई दस वर्ष में, कोई बीस-पच्चीस वर्ष में, और कोई अधिक-से-अधिक तीस-पैंतीस वर्ष में वापस आ जाती हैं। उनके लिए फिर मुझे नए शरीर की रचना करनी पड़ती है। इनकी ज़रा सी भूल के कारण मेरा कितना समय और मसाला व्यर्थ नष्ट होता रहता है !

लक्ष्मीजी ने कुछ क्रोध की मुद्रा बनाकर सिर हिलाते हुए कहा—अच्छा देखूँगी; और तब वज़ीरे आज़म को इशारा किया ; उन्होंने काग़ज़-पत्र सम्हाले ; सब लोग अपनी अपनी सवारियों पर बैठकर लौट पड़े।

छठवीं पेशी

छठवीं पेशी पर सबसे पहले नवाबाने हिंद की पुकार हुई; मालूम हुआ कुछ लोग आए हैं, कुछ लोगों ने अपने मुख्तारे आम को भेजा है और कुछ लोगों ने ज़रूरी बजूहात दिखलाकर पेशी बढ़ाने की दर्ख़ास्त दे दी है। ज़रूरी वजूहात में एक साहब ने लिखा था—चूँकि इस वक्त मौसम कुछ इतना ख़तरनाक है कि मेरा या मेरे मुख्तारे आम का इतना लम्बा सफ़र सही सलामत तै करना नामुमकिन नज़र आता है; इसलिए गुज़ारिश है कि मोआफ़िक़ मौसम आने तक मोक़दमे को मुल्तवी फ़र्माया जावे।

इस दख़ास्त को पढ़कर लक्ष्मीजी की त्योरियाँ ज़ोर-ज़ोर से बल खाने लगी थीं; देखिए क्या होता है?

हाज़रीन नवाबाने हिंद से वज़ीरे आज़म ने सवाल किया—आप लोगों का वकील कहाँ है? बैरिस्टर साहब ने आगे बढ़कर कहा—बंदा हाज़िर है। वज़ीरे आज़म ने सवाल किया—यह कहाँ तक सच है कि हिन्दोस्तान की नवाबियाँ बवजह शायराने हिंद बर्बाद हुई हैं?

बैरिस्टर साहब—हुज़ूरे आज़म! ये लोग यकायक न मालूम कहाँ से फट पड़े; और मिस्ले बिजली तमाम नवाबाने हिंद के दिलों में घुसकर उनका गरेबाँ चाक कर डाला; जिगर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए; और उनके कलेजे को छलनी करके बेकाम बना दिया; जब वे लोग किसी काम के न रह गए तो ग़ैर हिंदुस्तानी लोगों ने आकर उनके मुल्क पर क़ब्ज़ा कर लिया।

मुद्दालेह के वकील ने जिरह की— यह तो मेरे दोस्त ने अपने बयान में साफ़-साफ़ कही दिया कि ये लोग न मालूम कहाँ

फिर लोगों ने देखा— माशूक़ा ने तुरबत के पास मुँह ले जाकर धीरे से कुछ कहा। जवाब में जो आवाज़ आई, लोगों ने सुना-

जुदाई के सदमे को टाले हुए हैं।
चले जाओ हम दिल सम्हाले हुए हैं॥

इसके बाद ज्योंहीं लोगों ने नज़र उठाई, माशूक़ा ग़ायब थी। जाते वक्त थोड़े से फूल तुरबत पर छोड़ गई। लोगों का ध्यान फिर तुरबत की ओर आकर्षित हुआ, आवाज़ आई :—

अब के जब आक़बत[1] से डरते हैं। किस तजाहुल[2] से याद करते हैं।
एक दो फूल नोचते चलते। मेरी तुरबत से जब गुज़रते हैं॥

× × × ×

सच तो कहते हैं कि अहसाँ का वज़न होता है।
चार फूलों से दबी जाती है तुरबत मेरी॥

इस जुमले को सुनकर आशिक़ की नाज़ुक मिज़ाजी व अहसान फ़रोशी पर हाज़रीन को सख्त अफ़सोस व तरस आया। लक्ष्मी जी को छोड़कर बाक़ी सभी लोगों की आँखों से आँसू की धार लग गई। क़ब्र से फिर आवाज़ आई—

लहराती झूमती सी ये क्यों उनकी याद है।
शायद वो मय पिए हुए आएँ बहार में॥

अब रंगे इज़्तराब[3] भी है इन्तज़ार में।
आने को कह गए हैं वो अबकी बहार में॥

उनकी इस बात से लोगों को मालूम हो गया कि दिलावर ने जाते वक्त इन्हें तसल्ली देने के लिए अगली बहार में मिलने का वादा कर दिया है—लोगों की निगाह तुरबत से हटी न थी। एक

१—परलोक। २—जान बूझकर अनजान बनना। ३—बेचैनी।

बार फिर सुनाई पड़ा—

१ २
न पूछ हाल मेरा चोबे ख़ुश्क सहरा हूँ ।
लगा के आग मुझे क़ाफ़िला३ रवाना हुआ ॥

बस इसके बाद पहले की तरह सन्नाटा था। जिन लोगों ने दिलावर को पहचान लिया था; वे ताड़ गए कि वह कमला के ज़ालिमाना बर्ताव से बेफ़िक्र हो चुकी थी, इस लिए वक्त के पहले ही नौ-दो ग्यारह हो जाना मुनासिब समझा। लेकिन यह बुरा हुआ कि हाज़रीन की, आशिक़ के मुँह से कुछ और सुनने की ख़्वाहिश अधूरी छोड़ गई।

हरहाइनेस ने मुद्दई की तरफ़ घूमकर कहा आशिक़ का बयान बतलाता है कि उसे माशूक़ा से कोई शिकायत नहीं है, बल्कि वह अब तक उससे मोहब्बत करता है; फिर तुमने यह झूठा दावा क्यों दायर किया ?

मुद्दई के वकील ने आगे बढ़कर जवाब दिया—दावा किसी आशिक़ माशूक़ के ख़िलाफ़ हरगिज़ नहीं है; आप पहले अर्ज़ी दावा पढ़ने की तकलीफ़ गवारा करें; दावा तो शुअराए हिन्द के ख़िलाफ़ है और उसकी वजह है बर्बादिए नवाबी हुकूमत।

लक्ष्मीजी ने सर खुजलाते हुए कहा— मैंने बिला वजह उस रोज दिलावर को सज़ा दी। ख़ैर ! अगली पेशी पर उन लोगों को पेश करो जिनको बवजह शोराए हिन्द नुक़सान पहुँचा है। फिर ब्रह्माजी की ओर घूमकर बोलीं — मैं यह देख रही हूँ कि आशिक़ों के अन्दर मरने के बाद भी कुछ जान बाक़ी रह जाती है, यह तुम्हारा कैसा रद्दी इन्तज़ाम है ?

१—लकड़ी। २—सूखी। ३—यात्रियों का समूह।

से यकायक फट पड़े; इसलिए यह पूछना तो बेकार है कि ये लोग किस सिम्त से या किस दर्वाज़े से घुसे; लेकिन यह बतलाने में तो शायद आपको कोई परदा न होगा कि नवाबाने हिंद के दर्बार में घुसते वक्त इन लोगों के हमराह कौन-कौन से हथियार थे ?

बैरिस्टर सा० — यही तो कमाल है ! किसी हथियार के न होते हुए तो इन लोगों ने इतना जुल्म ढाया; अगर कहीं हथियार होते तो न मालूम क्या करते ?

वकील ने हँसते हुए कहा—तो यों कहिए कि ये लोग कुछ जादू जानते थे !

बैरिस्टर सा०—मैं तो कहता हूँ कि इन लोगों ने मिस्ल बिजली काम किया; जादू-वादू मैं कुछ नहीं जानता।

वकील ने मुस्कराते हुए कहा— मेरे दोस्त ! मैं यह कब कहता हूँ कि आप जादू जानते हैं ? जादूगर तो शोराए हिंद थे। मालूम होता है, इन लोगों ने आहो फुगाँ से ही गरेबाँ चाक कर डाला और जिगर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए; लेकिन नवाबाने हिंद को पता भी नहीं चला कि ये सब कब और कैसे हो गया ?

बैरिस्टर सा०—हाँ यही तो मेरा कहना है।

वकील सा० — तो यह भी हो सकता है कि नवाबाने हिंद को इस तरह के मीठे हथियार से हलाल होना अच्छा भी लगता रहा हो और ये लोग इसके एवज में हमारे शोराए हिंद को कुछ देते भी रहे हों।

बैरिस्टर सा०—आप कुछ देने की बात करते हैं ? इन्होंने नवाबाने हिंद के जिस्म में वह बिजली दौड़ाई थी कि वे लोग शोराओं पर फ़िदाए जाँ हो रहे थे।

वकील ने नवाबाने हिंद में से एक की तरफ़ मुख़ातिब होकर सवाल किया—क्यों साहब ! क्या आप बतला सकते हैं कि जिस वक्त आप के यहाँ ग़ैर हिन्दुस्तानियों ने हमला किया, उस वक्त आप की ड्योढ़ी पर कौन था ?

नवाब साहब ने त्योरी बदल कर कहा— बतला क्यों नहीं सकते ? क्या तुम समझते हो कि इतनी बड़ी हुकूमत मैं बदहवास रहकर करता था ? उस वक्त मेरी ड्योढ़ी पर चार जवाँ मर्द थे — छुट्टनमियाँ, ढोल्लन खाँ, मुहम्मद पिट्टू और आशिक़ हसन।

वकील सा०— और हुज़ूरआली उस वक्त कहाँ थे ?

नवाब साहब इस बार बेतरह बिगड़ कर बोले— इन सब बातों से तुम्हें क्या मतलब ? तुम सिर्फ़ अपने अदालती सवाल करो।

वकील सा०—नवाब साहब माफ़ कीजिएगा,यह अदालते ख़ुदा है। ख़ुदाई ऐक्ट नं० सात खरब छै के मुताबिक़ मुझे सब कुछ पूछने का हक़ है। आपको क्या मालूम कि किस सवाल से मेरा कौनसा मतलब हल होता है ?

नवाब साहब को फिर भी आनाकानी करते हुए देखकर वकील ने कहा– हाँ तो मेरे सवाल का जवाब ?

नवाब साहब—ऐ है ! इसके मानी तो मियाँ ये हुए कि आप मुझसे यह भी दरियाफ़्त करने के मुस्तहक़ हैं कि उस वक्त मेरी किस बीबी के पेट में कौन-सा बच्चा था ? हम तो समझते थे कि ख़ुदाई अदालत में छिनी हुई सल्तनत वापस मिल जायगी; मगर यहाँ तो रही-सही पाग की इज्ज़त व आबरू भी ख़तरे में नज़र आती है। न मियाँ हमें कुछ नहीं देना गवाही – वबाही !

बाज़ आये हम ऐसे हक़ व इन्साफ़ से ! इतना कहकर नवाब साहब चलने लगे।

वज़ीरे आज़म ने डाटकर कहा—ठहरो ; यह ख़ुदाई अदालत है ; यहाँ हर काम इन्साफ़ की रू से होता है। वकील साहब के हरएक सवाल का जवाब तुम्हें देना होगा।

नवाब साहब बड़ी बेबसी के साथ बोले— तो एक साथ ही सब कुछ पूछ लो न मियाँ !

वकील सा० — मैं जब-जब जो ज़रूरी समझूँगा पूछता जाऊँगा। आप फ़िलहाल मेरे पहले सवाल का जवाब दीजिए।

नवाब साहब ने अनमने से-होकर कहा — मैं उस वक्त ज़रा तबीयत ख़राब होने की वजह से आरामगाह में था।

वकील सा०—आपके साथ आरामगाह में कौन-कौन था ?

नवाब सा०—मेरे पास उस वक्त मेरे प्राइवेटसेक्रेटरी[1] इश्क़-मुहम्मद, सिपहसालार तलवारसिंह और हवलदार शेरअली थे।

वकील सा०—और कोई था ?

नवाब सा०—और···और·· और तो कोई नहीं था।

वकील सा०—और···और मुझे याद है आपके पास नन्हीं, सब्बो और ज़मीरन थीं।

नवाब साहब बिगड़कर बोले—हैं ! ये मियाँ आपको कैसे मालूम होगया ?

वकील सा० यह मुझ को आपके प्राइवेटसेक्रेटरी इश्क़-मुहम्मद से पता लगा है। मैं बिला तैयारी यहाँ आपसे जिरह करने नहीं आया।

---

[1] व्यक्तिगत-मंत्री, ख़ास सलाहकार।

नवाब सा०—लेकिन वे तो बड़ी देर बाद आई थीं।

वकील सा०— ख़ैर छोड़िए भी इस पचड़े को। यह बतलाइए कि हमला होने के कितनी देर पहले आपको आपकी सरहद में दुश्मन की फ़ौजके दाख़िल होनेकी ख़बर मिल गई थी ?

नवाब सा०—मुझे तो बहुत पहले ख़बर लग गई थी; लेकिन उस वक्त तो दुश्मन की फ़ौज बड़ी दूर थी।

वकील सा०—ख़बर मिलने के बाद आपने क्या इन्तज़ाम किया ?

नवाब सा०— मैंने ख़बर पाते ही फ़ौरन अपने कारपरदाज़ मीर हराम अली को उन लोगों का मक़सद जानने के लिए भेजा ; बल्कि उससे साफ़-साफ़ कहलवा दिया था कि उन लोगों को जिस-जिस चीज़ की ख़्वाहिश हो, वह उन्हें फ़ौरन सरहद के बाहर ही पहुँचा दी जायगी, यहाँ तक आने की तकलीफ़ गवारा न करें ; मगर पता नहीं हराम अली वहाँ तक पहुँचा या नहीं; मैं उसके लौटने का रास्ता ही देखता रह गया, और उदू की फ़ौज महल तक आगई।

वकील सा०— फिर आपने क्या किया ?

नवाब सा०—फिर क्या करता ! एक तो साहब हम लोगों को शोरो गुल बहुत कम पसंद है और वे लोग इतना शोरो गुल करते हुए आए कि कान के परदे यूँ ही फटे जा रहे थे ; बातचीत उनसे कौन करता ? दूसरे वे लोग ऐसे बदइख़लाक़ इंसान थे कि मैं क्या बयान करूँ ! बिला मुझे इत्तला दिए हुए और बग़ैर मेरी इजाजत हरम में दाख़िल होगए। मैंने सोचा—कौन इन वाहियात आदमियों के मुँह लगे ?

वकील सा०—तब क्या मैं जान सकता हूँ कि आपने वहाँ से तशरीफ़ लेजाने की तकलीफ़ गवारा क्यों नहीं की ?

नवाब सा०—क्या अर्ज़ करूँ; मन में तो एक मर्तबा आया भी था; मगर कमबख्त जूतियाँ पिन्हाने वाले तो पहले ही से फ़रार थे।

वकील सा०—तब हुज़ूर ने आखिरश नजात कैसे पाई?

नवाब साहब ने कुछ झेंपते हुए कहा—ख़ुदा के वास्ते यह सवाल न कीजिए। अल्लाह ताला ही गवाह है कि मैंने कैसे नजात पाई। ख़ुदा का लाख-लाख शुक्र कि परदानशीनों की इज़्ज़त आज भी हर सिम्त और चार सू दुनियाँ में होती है।

वकील साहब ने तन्ज़िया लहजे में कहा—उफ़्फ़ोह! तो गोया, 'मुए इधर न आइयो जनाने हैं' वाला मज़मून था। ख़ैर क़िस्सा गोताः! उनसे मोचा लेने का आपने कोई मौक़ा नहीं आने दिया।

नवाब साहब ने चौंककर कहा—लाहौल बिला···! ये सब जनाब हम लोगों को कभी पसंद नहीं रहा। इन्सानियत का जामा पहन कर लड़ाई झगड़ा करना हम लोगों ने सीखा ही नहीं; यह तो इन्सानियत के बिल्कुल बईद[1] बात है; फिर अपने मेहमानों की ख़ातिर तवाजह न करके उनका गला काटना यह किसने सिखाया है? हाँ उन लोगों ने ज़रूर ग़ल्ती की कि क़ायदे से इत्तला देकर नहीं आए; बल्कि बेक़ायदे, बेवक्त धड़धड़ाते हुए जनानखाने में घुस पड़े। इत्तला तो देते! हमतो सर आँखों पर उन्हें लेते; आने की ख़्वाहिश तो ज़ाहिर करते; हम तो दावतें देते साहब! दावतें; मगर वे तो आँधी बवंडर निकले साहब! ख़ैर हम तालीमयाफ़्ता और ख़ानदानी आदमी ठहरे! झगड़ा झाँसा करना ठीक न समझ कर मोर्चा नहीं लिया; दाँव ख़ाली दे गए।

१—विरुद्ध, ख़िलाफ़।

वकील सा०—अच्छा जनाब यह तो बतलाइए, क्या आपके हरमख़ाने में कोई हब्शी बेग़म भी थी ?

नवाब सा०—हैं ! हैं ! अब तो आप मुझे काँटों में घसीटने लगे साहब ! और अगर आप मुझसे वाक़या ही बयान करवाना चाहते हैं साहब, तो..... सर खुजलाने लगते हैं।

वकील सा०—गुस्ताख़ी माफ़ हो नवाब साहब ! इसके मानी मैं यह निकालना चाहता हूँ कि आपके पास महज़ एक ही हब्शी बेग़म थी। अच्छा मैं आपको और तकलीफ़ नहीं देना चाहता। अब आप आराम कीजिए। फिर वज़ीरे आज़म की तरफ़ मुख़ातिब होकर बोले — आलमपनाह ग़ौर फ़र्मा हों। नवाबाने हिंद शुरू से ही आरामतलब और ऐयाशतबीयत रहे हैं; इसी वजह से हमेशा वाक़िफ़ कारिए हुकूमत से महरूम रहे। रैयत का ....।

नवाब साहब के मुँह से बेसाख़्ता निकल पड़ा —हुज़ूर हर बात का जवाब देना तो ज़रूरी था ही; अब क्या ख़ुदाई अदालत में बैठकर यह तौहीन भी इस शाही तमकनत[1] को बर्दाश्त करनी होगी ?

वज़ीरेआज़म ने ज़रा रोब के साथ कहा — क्या आप ख़ामोश[2] रह सकेंगे ?

वकील ने फिर बोलना शुरू किया—हाँ, तो आलमपनाह रैयत का ख़ास रवैया है, 'जैसा राजा वैसी प्रजा' जिस तबीयत का राजा होता है, उसी तरह की रैयत हो जाती है। अगर राजा ऐयाश है, तो लामोहाला रैयत भी ऐयाशी की तरफ़ रुजू होगी।

नवाब साहब सीने पर हाथ रखकर तोबा तोबा कह उठे।

१—दर्प, मान, शान-शौक़त। २—ख़ामुख़ाँ।



क्या आपके हरमखाने में कोई हब्शी बेगम भी थी? (पृष्ठ १५८)

वकील साहब बोलते गए—अगर राजा की नीयत साफ़ नहीं है, तो यह हर्गिज़ नहीं हो सकता कि रैयत बाईमान रह सके, और अगर राजा की नीयत पाक साफ़ है ; वह बाईमान है, तो रैयत हर्गिज़ हर्गिज़ बेईमान नहीं हो सकती। हाँ, तो हमारे शुअराए हिंद नवाबाने हिंद की रैयत थे; और ये उनके अन्न दाता थे। उन्होंने जिस तरह इनकी तबीयत देखी, उसी तरह के सख़ुन से इन्हें ख़ुश किया;इसमें हमारे शुअराए हिंद का कोई क़ुसूर नहीं।

मुद्दई के वकील ने जिरह की—आख़िरश यह कमज़ोरी नवाबाने हिंद में फिर क्योंकर बर्पा हुई ? इसके पहले तो मुसलमानी सल्तनत का यह हाल नहीं था।

मुद्दालेह के वकील ने तानाकशी करते हुए कहा — जनाब का मतलब है कि यह कमज़ोरी बवजह शुअराए हिंद नाज़िल हुई। मालूम होता है आपने तवारीख़ के सफ़े उलटने की तकलीफ़ गवारा नहीं की। दोस्तमन ! ऐयाशी और मयकशी पर तो इन लोगों का मौरूसी हक़ है। आप ज़रा एक मर्तबा मेरी तरफ़ से तवारीख़ पर बारीक निगाहें फेंकिए, तब आपको मालूम होगा कि मयकशी इनके पुश्त दर पुश्त से चली आई है। ऐयाशी के लिए तो यह कहना ग़ैर मौज़ूँ न होगा कि —

अज़ल से हुस्न परस्ती लिखी थी क़िस्मत में।
मिज़ाज इनका लड़कपन से आशिक़ाना था॥

इसका एक बेजोड़ सुबूत है कि—मुसलमान हमलावर जिस किसी हुकूमत पर भी फ़तह हासिल करते थे वहाँ से अपने लिए सबसे बड़ा तोहफ़ा तलब करते थे—किसी ख़ूबरू का डोला। अब आप लगा लीजिए इनकी आशिक़ मिज़ाजी का अन्दाज़। यह आशिक़ मिज़ाजी कभी-कभी इनको ख़तरे में भी डाल देती

थी; क्योंकि अक्सर ऐसा भी हुआ है कि डोले के अन्दर से बजाय किसी चमकदार माशूक़ा के चमकती हुई तलवारें निकल पड़ी हैं; और उस वक्त इन्हें तोबा करके माफ़ी माँगनी पड़ी है; तब कहीं जाकर मौत से निजात पाई है। यह तैशुदा बात है कि आशिक़ मिज़ाज कलाइयाँ कभी खंजरे हुकूमत का बोझ नहीं उठा सकतीं।

मुद्दई के वकील को मौक़ा मिला। उसने भी फ़ब्ती कसी— अब जनाबमन्! ग़ौर फ़रमा हों कि तवारीख़ मैंने नहीं देखी या आपने? क्या जनाब ने मुसलमान शहन्शाह अकबरे आज़म का नाम कभी सुना या पढ़ा है? क्या उसके मीना बाज़ार की दास्ताँ मेरे दोस्त को मालूम है?

मुद्दालेह का वकील बीच ही में बोल उठा— ख़ूब! ख़ूब!! अच्छी तरह; सुना भी है और पढ़ा भी है; मेरे दोस्त का मतलब है कि अकबर भी काफ़ी आशिक़ मिज़ाज था, फिरभी उसकी हुकूमत में कमज़ोरी क्यों नहीं आई? इसकी वजह बतलाने के पहले क्या मैं अपने दोस्तसे यह पूछ सकता हूँ कि अगरचे कोई भी हुकूमत बवजह शेरो सख़ुन या शायर कमज़ोर हो सकती है, तो क्या ज़मानए अकबर में इनकी कमी थी? वह तो ख़ास तौर से इनका शायक़, क़द्रदान और मददगार था। मीना बाज़ार को याद रखते वक्त हमारे दोस्त ने अकबरे आज़म के नौ रत्नों को क्यों भुला दिया? ख़ैर, मुझे अपने सवालात का जवाब मिले या न मिले; मैं जनाब के सवाल का ठीक जवाब देरहा हूँ; बग़ौर समझने की तकलीफ़ गवारा करें; इस में कोई शक नहीं कि अकबर की आशिक़ मिज़ाजी लामिसाल थी; बल्कि मैं तो कहूँगा कि उसकी आशिक़ मिज़ाजी ने उसकी औलाद दर औलाद के लिए झगड़ों और ऐयाशी की जड़ जमा दी। उसीके जमाए हुए पौदे का कड़ुआ फल उसकी औलादों को आगे चलकर चखना पड़ा। मीना बज़ार तो एक मामूली सी मिसाल

है। उसकी हिन्दू बेग़मों की गिन्ती और उनकी ख़ुशी के लिए उसका वक्तन-फ़वक्तन हिंदुवाना लिबास पहनना, कंठी – माला पहनना वग़ैरह वग़ैरह बातें, उसकी ऐयाशी की अच्छी मिसालें हो सकती हैं; लेकिन बावजूद इन बातों के उसमें एक ज़बर्दस्त गुण था, जो कि उसकी सल्तनत को बावजूद नुक़सान पहुँचाने के मज़बूत ही बनाता गया—वह थी उसकी नीति। वह अच्छी तरह जानता था कि मुझे हिंदोस्तान पर हुकूमत करनी है और हिंदोस्तान के ख़ास बाशिंदगान हिंदुओं को मिलाकर रखना इसके लिए निहायत ज़रूरी है। इसीलिए आप देखेंगे कि उसके ख़ास-ख़ास ओहदेदार हिंदू थे; यहाँ तक कि उसके वज़ीरों में सबसे पहला नाम बीरबलका है, आप तवारीख़ के सफ़े उलटिए—जबतक मुसलमान बादशाहों ने हिंदुओं से इत्तफ़ाक़[1] और इत्तहाद[2] रखते हुए हुकूमत की है, तब तक बड़े मज़े से इनकी हुकूमत दौरे तरक्की पर रही। बरख़िलाफ़ इसके जब से क़ौमी झगड़ों की इब्तिदा[3] हुई है, तभी से तनज्जुली ने क़दम बढ़ाया है; और क़ौमी झगड़ों की फ़िसाद है, मुसलमान बादशाहों की विवाह संबंधी गैर दूरन्देशी। पहली बात तो यह है कि एक शख़्स की एक से ज्यादे शादियाँ यूँहीं तवारीख़ आलम में हमेशा से मुज़िर साबित होती आई हैं। फिर जबकि बीबियाँ मुख़्तलिफ़ क़ौमों की हों तो कहना ही क्या है? यही हाल इन मुस्लिम हुक्कामों का हुआ। मुसलमान बीबियाँ हिंदू बीबियों की औलादों से और हिंदू बीबियाँ मुसलमान बीबियों की औलादों से हसद रखती रहीं और यही हसद बढ़ते-बढ़ते हिंदू-मुस्लिम ईर्ष्या के रूप में परिणत होकर बादशाही घरानों से बढ़कर देश भर में फैल गई। दुश्मनों ने इस कमज़ोरी से फ़ायदा उठाया और उन्होंने इस ईर्ष्याग्नि में घी डालकर अपना हाथ सेंका। हिंदुओं ने

१—मेल, मित्रता। २—मैत्री। ३—शुरुआत, आरम्भ।

मुसलमानों को और मुसलमानों ने हिंदुओं को मदद देना बन्द कर दिया। धीरे-धीरे यह आग यहाँ तक भड़की या भड़काई गई कि एक-दूसरे के जानी दुश्मन बन बैठे। कहा जाता है कि इसकी नीव को गहरी करने वाले हमारे बादशाहे आज़म औरंगज़ेब बहादुर हैं। पता नहीं, कहाँ तक यह ठीक या ग़लत है, या इसमें और क्या-क्या राज़ हैं; मगर.....

अभी बहँस हो ही रही थी कि हर हाइनेस ने बिगड़ कर कहा—वज़ीरे आज़म! बन्द करो इन तमाम वाहियात झगड़ों को। इधर देखो; कितने ज़रूरी काग़ज़ात पड़े हुए हैं!

पेशी बढ़ाते हुए वज़ीरे आज़म लक्ष्मी जी की तरफ़ मुख़ातिब हुए।

मयकशों पर रहमत—

आशिक़ाने-मुस्कान को मालूम होना चाहिए कि तीसरी पेशी पर हिन्दुस्तानी हुजूम के शोरो गुल मचाने पर दर्बारे आज़म से हुक्म मिला था कि एक नुमायन्दा इन्तख़ाब करके भेजा जा सकता है। बहुक्म ख़ुदा बज़रिए नुमायन्दा शराबियों ने दूसरे ही दिन दर्ख़ास्त भेज दी थी; मगर इतने दिनों तक वह दर्ख़ास्त यूँहीं फ़ाइलों में चक्कर काटती रही। आज हर हाइनेस की निगाह काग़ज़ों को उलटते-पलटते वक्त उस दर्ख़ास्त में उलझ गई। उन्होंने वज़ीरे आज़म से फ़र्माया—यह दर्ख़ास्त कितने दिनों से पड़ी है?

वज़ीरे आज़म—यह तो आलमपनाह के वक्त से ही पड़ी हुई है।

हर हाइनेस—इस पर कार्यवाही क्यों नहीं हुई?

वज़ीरे आज़म ज़रा सिट-पिटाकर— कुछ ख़याल····· कहते-कहते— फिर कुछ सोचकर बोले— फ़ुर्सत नहीं मिली।

हर हाइनेस ने क्रुद्ध होकर कहा — फ़ुर्सत नहीं मिली ! ऐसी कैसी फ़ुर्सत ? आपने तो फ़ुर्सत नहीं मिली कहकर टाल दिया; उधर चाहे किसी की जान निकल जाए !

वज़ीरे आज़म ने हर हाइनेस के रुख़ को सम्हालते हुए धीरे से एक काग़ज़ सामने पेश करते हुए पूछा — इस दर्ख़ास्त के लिए क्या हुक्म होता है ? दर्बार के बाहर भूख से तड़पते हुए लाखों बूढ़े, बच्चे और नौजवान हिन्दुस्तानी पड़े हुए हैं।

हरहाइनेस ने बड़ी गंभीरता से दरख़्वास्त पर नज़र दौड़ाई; फिर बोलीं — मैं ख़ुद चलकर हिंदुस्तानियों को देखना चाहती हूँ। इतना कहकर वे ख़ुद अपने मुसाहबों के साथ बाहर निकलने को तैयार हुईं ; इतने में ही इन्द्र नारायण ने निहायत अदब के साथ कहा— हर हाइनेस इस छोटी सी बात के लिए तकलीफ़ गवारा न करें। मैं सभी बातों का ठीक-ठीक पता लगाकर हुज़ूरे आज़म को अभी इत्तला करता हूँ। लक्ष्मी जी रुक गईं। इन्द्र नारायण तथा दो-एक और ख़ास-ख़ास ओहदेदारान परिस्थिति का पता लगाने के लिए भेज दिए गए। वे लोग थोड़ी देर भीड़ के इर्द-गिर्द चहलक़दमी करते रहे और कुछ देर बाद लौट कर लक्ष्मी जी से बोले—ऐसा कोई संगीन मामला नहीं है। चन्द कामचोर आदमी बवजह अपनी सुस्ती और बेकारी के भूखों मर रहे हैं। कुछ लोग शराबख़ोरी की आदत से उसके बिला बेचैन होकर मर रहे हैं।

लक्ष्मी जी ने हुक्म दिया — शराबख़ोरों के लिए बड़े-बड़े शहरों और क़स्बों में दूकानें खुलवा दो; लेकिन उन्हें बनी-बनाई

शराब अपने यहाँ से सप्लाई करो—हिंदुस्तानियों को शराब बनाने की इजाजत मत दो। सब दूकानें अपने मातहत रक्खो। उन दूकानों से इतना ज्यादा कर वसूल करो कि जिससे शराब काफ़ी महँगी बिके और लोग ज्यादा न पी सकें।

वज़ीरे आज़म ने सवाल किया — और भूखे लोगों के लिए क्या हुक्म होता है ?

जवाब मिला — उसके बारे में दो-चार दिन बाद विचार करके बतलाया जा सकेगा।

ब्रह्मा जी ने कहा — इतने दिनों में तो यमराज जी हज़ारों आदमियों को, भूखे रहने के जुर्म में पकड़-पकड़ कर, मेरे कार्यालय में ढेर लगा देंगे।

लक्ष्मी जी ने उनकी बात का कोई जवाब न देते हुए उस दिन कचहरी बर्ख़ास्त कर दी।

बाहर निकलने पर वज़ीरे आज़म ने ब्रह्मा जी से कहा—देखा आपने ! शराबियों की दरख़्वास्त ज़रा पड़ी रह गई तो मुझ पर कितना रोब ग़ालिब किया गया ? और अब इन भूख से तड़पने वालों का विचार चार दिन बाद होगा !

ब्रह्मा जी ने धीरे से कहा—बस, चुपचाप सब देखते-सुनते जाइए; बोलने का काम नहीं है।

१— पुजारी, दो।

सातवीं पेशी

आज शुअराए हिंद के मुक़दमे का फ़ैसला था। इजलास दर्शकों से खचाखच भरी हुई थी। रीडर बहुक्म हर हाइनेस फ़ैसला सुनाने के लिए खड़ा ही हुआ था कि नारद जी महराज, "श्रीमन्नारायण-नारायण नारायण" के उच्च स्वर से लोगों का ध्यान आकर्षित करते हुए, दर्बार में दाखिल हुए। उन्होंने सीधे हर हाइनेस के पास जाकर धीरे से कुछ कहा; फल स्वरूप लक्ष्मी जी ने फ़ैसले की तारीख़ बढ़ा दी।

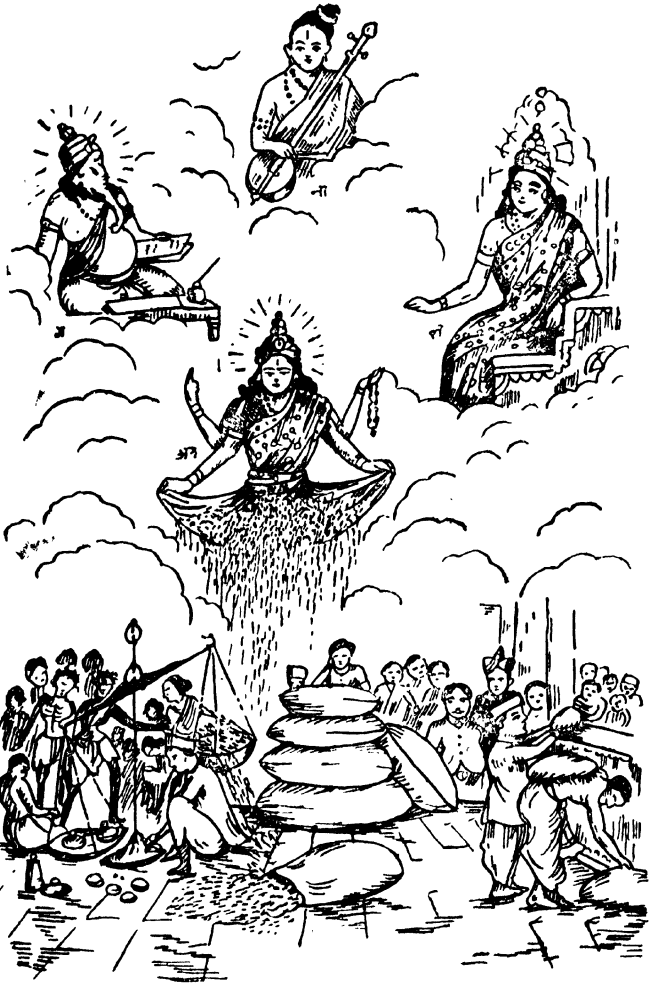
इसके बाद पेशकार ने एक काग़ज़, जिसके अन्दर भूखे हिंदुस्तानियों की रिपोर्ट दर्ज थी, लक्ष्मी जी के आगे पेश किया।

रिपोर्ट में लिखा था—भूखे हिंदुस्तानियों में से अनक़रीब दस हज़ार बूढ़े, बच्चे और जवान मर चुके हैं; तक़रीबन चार-पाँच हज़ार की हालत ख़तरनाक है। इस गिन्ती में औरतें भी शामिल हैं।

रिपोर्ट को पढ़कर बड़ी देर तक लक्ष्मी जी बहुत गंभीरता से विचार करती रहीं। इतने ही में दूसरी रिपोर्ट आई, जिसमें लिखा था कि सुबह से अब तक दो हज़ार इन्सानों की ज़िन्दगी और भूख के हवाले हो चुकी है।

अब हर हाइनेस ने हुक्म दिया—मरे हुए आदमियों की लाशें उल्लू गाड़ियों पर लदवा कर समुद्र में फिंकवा दो। जो अभी ज़िन्दा हैं, उन्हें ज़िन्दगी क़ायम रखने भर के लिए वज़न कर-करके

मुस्कान



गल्ला बाँटने के लिए अन्नपूर्णा देवी तैनात हुई। (पृष्ठ १६७)

रोज़ ग़ल्ला तक़सीम करो। ग़ल्ले की मुनासिब क़ीमत हिंदुस्तानियों से वसूल करो। इस बात का पूरा ख़याल रहे कि ज़रूरत से ज्यादे खाना किसी के पेट में न पहुँचने पाए।

हुक्म की तामील की गई, ग़ल्ला बाँटने के लिए अन्नपूर्णा देवी तैनात हुईं। हिसाब लिखने का काम लम्बोदरानंद शास्त्री को सौंपा गया, तथा लाशों को ठिकाने लगाने के लिए यमराज जी के सैकड़ों कारिन्दे डट गए।

एक दिन किसी किसान ने दर्बार में हाज़िर होकर लक्ष्मी जी से विनय की—सरकार! हम लोगों का पेट उतने अन्न से नहीं भरता, जितना कि अन्नपूर्णा जी का प्रसाद है;इसलिए हम लोगों का ज़ब्त किया हुआ ग़ल्ला हमें वापस कर दिया जाय; हम लोग उसी में से कुछ खाकर अपनी गुज़र करेंगे; कुछ फिर से बो देंगे; जिससे अगले साल के लिए पैदा कर लेंगे।

लक्ष्मी जी ने कहा—और लोगों का पेट भर जाता है, तुम्हारा क्यों नहीं भरता?

किसान ने जवाब दिया—इसमें मेरा क्या दोष है? ब्रह्मा जी ने सबका पेट एक-सा नहीं बनाया; फिर जो कुछ अन्नपूर्णा जी देती हैं उसमें से अधिकांश भाग तो शंकर जी के चर भूत,बैताल, पिशाच आदि उदरस्थ कर लेते हैं। हम लोगों को उतना भाग भी नहीं मिलता, जितना सरकार ने निश्चित किया है। शंकर जी के ही सुपुत्र लम्बोदरानंद जी शास्त्री हिसाब-किताब लिखने पर तैनात हैं; इसी कारण उनके चर और भी मनमानी करते हैं। हम लोगों की तो हर तरफ़ से मौत है।

लक्ष्मी जी शंकर-सेना के अत्याचार को सुनी-अनसुनी

करके ब्रह्मा जी की ओर घूमकर बोलीं—क्यों ? आप सृष्टि-रचना करते-करते बूढ़े हो गए; फिर भी आज तक आपका साँचा जलेबी का ही साँचा बना रहा !

बेचारे ब्रह्मा जी सिटपिटा कर रह गए। सरस्वती जी यद्यपि न्यायालय में सदा उपस्थित रहती थीं, किन्तु कभी कुछ बोलने का कष्ट नहीं उठाया करती थीं। आज वयोवृद्ध ब्रह्मा जी का व्यर्थ अपमान देखकर चुप न रह सकीं; वे ज़रा रुष्ट होकर बोलीं—क्षमा कीजिएगा; इसमें ब्रह्मा जी का तो कोई अपराध मुझे नहीं दीखता ! आप ही तो अपनी कृपा से किसी को बड़े-बड़े महलों में, मोटे-मोटे गद्दों पर बिराजमान रखती हैं; किसी-किसी को दर-दर की ठोकरें खिलाती हैं। वे बेचारे दीन कृषक, जो दिन-रात अपना खून पानी करके, कड़ी धूप में, कड़कड़ाते हुए जाड़े में और मूसलाधार बरसते हुए पानी में कठिन परिश्रम द्वारा अन्न पैदा करते हैं, उन्हें तो पेट भर भोजन नहीं मिलता; उनके भाग्य में ज्वार-बाजरे की सूखी रोटियाँ रहती हैं, और वे लोग जो कभी खेत के दर्शन तक नहीं करते, ग्रीष्म-ऋतु में खस की टट्टियों के अन्दर बैठे रहते हैं, शरद में दस बजे के पहले घर से बाहर नहीं निकलते, वर्षा में कमरे के बाहर पैर रखने का साहस नहीं करते, मौज से गेहूँ और बढ़िया-से-बढ़िया चावल उड़ाते हैं; तथा ऐश्वर्य, वैभव और विलासिता का जीवन व्यतीत करते हैं। आपको ज्ञात होना चाहिए कि जो लोग परिश्रम करते हैं, उनकी पाचन-शक्ति अधिक होती है; और जो लोग गद्दे के सहारे दिन-रात बैठे-बैठे मौज करते हैं, उनकी पाचन-शक्ति क्षीण होती जाती है। इसी कारण वे भोजन कम कर पाते हैं; इसमें ब्रह्मा जी के साँचे का दोष नहीं है।

सरस्वती जी के इतना बोलते ही तो लक्ष्मी जी का पारा एकदम चढ़ गया। वे गरज कर बोलीं — आप चुप रहें; गुस्ताख़ी की भी हद होती है। मुझे खूब मालूम है कि हिज़ हाइनेस की मर्यादा के विरुद्ध जितनी कविताएँ लिखी गई हैं, वे सब आपके ही उपासकों की करामात है। आपके ही इशारों के बल पर उन लोगों ने ऐसी बेसिर पैर की कविताएँ लिखने की हिमाक़त की है। अब मैं आपके उपासकों को अच्छी तरह देखूँगी।

ब्रम्हा जी की अर्धाङ्गिनी सरस्वती जी भी भला लक्ष्मी से कब दबने वाली थीं? उन्हें भी ताव आ गया; वे झल्ला कर बोलीं—आप मेरे उपासकों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकतीं—कहती हुई सरस्वती जी दर्बार से उठ खड़ी हुईं और जाने लगीं।

लक्ष्मी जी ने रोक कर कहा—तो आप इतने ताव से चलीं कहाँ?

सरस्वती जी ने आगे बढ़ते हुए कहा — कोई समझदार सवारी ढूँढ़ने के लिए।

लक्ष्मी जी— यानी?

सरस्वती जी—अर्थात् उलूक-वाहकों की सभा में मेरा रहना वांच्छनीय नहीं है; अस्तु ऐसी सभा में रहूँगी जहाँ उलूक-वाहन का शासन न हो— कहती हुई सरस्वती जी तीर के समान तेज़ी से दर्बार से बाहर निकल गईं।

इस झगड़े से हिंदुस्तान में भी दो अलग-अलग दल बन गए। सरस्वती और लक्ष्मी के उपासकों में बड़ा मतभेद रहने लगा। इन दोनों का मेल कभी खाता ही नहीं।

सरस्वती जी के चले जाने पर हर हाइनेस ने किसान से कहा—तुम लोगों को जितना खाना दिया जाता है; उसी में अपना काम चलाओ। कुछ दिन तक तकलीफ़ होगी। इसके बाद मैंने ब्रह्मा जी से कह दिया है कि वे सब का पेट एक ही साँचे में ढाला करेंगे, जिससे कोई कम और कोई ज़्यादा खाना न खा सके।

किसान ने हाथ जोड़ कर कहा — लेकिन सरकार! वह साँचा मेरे किस काम का होगा? वह तो अब आगे पैदा होने वालों के काम आएगा। मुझे तो एक बार भूख से मर ही जाना पड़ेगा।

लक्ष्मी जी— नहीं; जान से मर नहीं जाओगे। कुछ दिन भूखे रहने में तकलीफ़ होगी, लेकिन कुछ दिनों तक कम खाते-खाते तुम्हारी ख़ुराक़ ही कम हो जायगी; फिर तो ज़्यादे मिलेगा तो भी न खा सकोगे।

किसान ने दीन-भाव से कहा — परन्तु सरकार इस प्रकार कमज़ोरी बढ़ती जायगी; फिर मैं इतना कमज़ोर हो जाऊँगा कि परिश्रम करके बाल-बच्चों का पेट नहीं भर सकूँगा।

लक्ष्मी जी को बहस की गुञ्जायश कहाँ? उन्होंने डाँटकर कहा— चुप रह बदतमीज़।

किसान ने फिर हाथ जोड़कर कहा—सो तो हम लोग सदा से रहते आए हैं। किंतु इस समय जीवन-मरण का प्रश्न था,

इस कारण बोल उठे। कोई रास्ता निकल आता तो कुछ दिन और संसार में रह लेते!

लक्ष्मी जी का क्रोध भड़क उठा; उन्होंने दर्बान को आज्ञा दी— इस गँवार को धक्के देकर बाहर निकाल दो। बदतमीज़, बदइख़्लाक़, बेवफ़ा, नामाकूल, देहाती कहीं का। जितना ही इन लोगों के लिए सहूलियत का रास्ता निकालो, सोचो, मराज़ लड़ाओ उतना ही ये लोग सर खाए जाते हैं—कहती हुई लक्ष्मी जी दर्बार छोड़ कर चली गईं।

बेचारा किसान मुँह लटकाए हुए दर्बार के बाहर निकल आया। बाहर आकर उसने दबी ज़बान से कहा :—

ये तर्ज़[1] अहसान करने का तुम्हीं को ज़ेब[2] देता है।
मरज़ में मुब्तिला करके मरीज़ों को दवा देना॥

---

१ — ढंग। २ — शोभा। संलग्न।

फैसला

उस दिन फ़ैसले को रोक कर लक्ष्मी जी ने ज़रा अक़्लमंदी से काम लिया और पहले फ़ैसले को रद्द करके दूसरा फ़ैसला तैयार कराया। मालूम नहीं पहले फ़ैसले का मज़मून क्या था? उसका पता लगाना कठिन ही नहीं वरन् असंभव है, क्योंकि वह बात बहुत ही कॉन्फ़िडेन्शल* रक्खी गई। लेकिन आज हस्ब ज़ैल फ़ैसला पढ़कर सुनाया गया—

मोक़दमे की तमाम कार्यवाहियों को देखते हुए तथा मुद्दई व मुद्दालेह की सफ़ाई और गवाहों की बहस पर नज़र दौड़ाने के बाद मालूम हुआ कि बर्बादिए नवाबी हुकूमत में शोराए हिंद का मुतलक़ क़ुसूर नहीं है; इसलिए शोराए हिंद बेदाग़ रिहा किए जाते हैं। मुद्दालेह को हक़ हासिल है कि वह अपनी परेशानियों और हर्जे ख़र्चे के लिए मुद्दई को माफ़ी माँगने के लिए मजबूर करे और अदालत का बहुत सा वक्त जो मुद्दई ने बिला वजह बर्बाद किया है, उसके जुर्माने में वह एक ऐसी किताब दर्बारे लक्ष्मी की तारीफ़ में लिखे जो कि एक हज़ार सफ़े से कम की न हो। मुद्दई अगर हुक्म की तामील करने में ज़रा भी आगा-पीछा करता हुआ नज़र आएगा, तो हर्जानए अदालत में उसके ऊपर सख़्त जुर्माना किया जायगा।

फ़ैसले की नक़ल ले-लेकर मुद्दई और मुद्दालेह अपने वतन को रवाना हुए।

इसके बाद का वाक़या इन्जानिब को मुतलक़ मालूम नहीं है, आशा है पाठक-वृन्द क्षमा करेंगे।

बस

* गुप्त।